थार मरुस्थल में पशु पालन

HelpAge International
age helps

Gravis

थार मरूस्थल में पशु पालन
2010

लेखक :
डॉ. एस॰ एस॰ कल्ला

प्रकाशक :
ग्राविस
ग्रामीण विकास विज्ञान समिति
3 / 437, 458 मिल्कमेन कॉलोनी, पॉल रोड़
जोधपुर – 342008, राजस्थान
फोन : 0291-2785317, 2785549, 2785116
फैक्स : 0291 - 2785116
ईमेल : email@gravis.org.in
वेबसाइट : www.gravis.org.in

सहयोग :
हैडकॉन
हैल्थ एनवायरमेन्ट एण्ड डवलपमेन्ट कन्सोर्टियम
67/145, प्रताप नगर, सांगानेर
जयपुर – 302022, राजस्थान
फोन : 0141-2792994, 2790741
ईमेल : hedcon2004@yahoo.com
वेबसाइट : www.hedcon.org

© ग्राविस

यूरोपियन यूनियन एवं हैल्प एज इन्टरनेशनल (यू.के.) के आर्थिक सहयोग से पी.ओ.सी. परियोजना के अन्तर्गत प्रकाशित

प्राक्कथन

विश्व के सभी हिस्सों में वृद्ध संख्या का अनुपात बढ़ता ही जा रहा है। यही स्थिति भारत में भी बनी हुई है। वृद्धों की इस बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए उचित सुविधाओं व योजनाओं की कमी है, जिसके कारण बहुत से वृद्ध कठिनाईयों के साथ जीने को विवश हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में वृद्धों की स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक है।

राजस्थान का थार मरूस्थल, दूनिया का सबसे दुर्गम और शुष्क क्षेत्रों में से एक है। यह क्षेत्र भौगोलिक दृष्टि से कमज़ोर, संसाधनों की अल्पता से ग्रस्त और आर्थिक विकास के लिए अपर्याप्त स्त्रोत होने के कारण पिछड़ा क्षेत्र रहा है। इन सभी कारणों की वजह से यहाँ रहने वाली अधिकतर जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे का जीवन व्यतित कर रही है। यही कारण है कि ज्यादातर पुरूषों (युवकों) को क्षेत्र से बाहर पलायन करना पड़ता है और पीछे रहने वाले बुजुर्गों की जिम्मेदारियाँ बढ़ जाती है। यही नहीं बहुत से परिवार टूट भी जाते है और माता – पिता को उम्र के आखरी पड़ाव में विषम परिस्थितियों का सामना अकेले ही करना पड़ता है। इन विषमताओं को महसूस करते हुए और वृद्धों के प्रति बढ़ती अपेक्षा को देखते हुए ग्राविस द्वारा संचालित ''**राजस्थान के कमजोर वर्गो में वृद्धों के नेतृत्व द्वारा निर्धनता उन्मूलन**'' (POC) परियोजना जोधपुर और जैसलमेर में चलाई जा रही है।

परियोजना का मुख्य उद्देश्य वृद्धों को उनके अधिकारों से अवगत करवाना और उन्हें आत्मसम्मान से जीने की प्रेरणा देना है। परियोजना द्वारा वृद्धों के स्वास्थ्य, अधिकार, सामाजिक विषमताओं को आधार मानकर अपेक्षित गतिविधियाँ की जा रही है।

वृद्धों में जानकारी और जागरूकता बढ़ाने के लिए ग्राविस द्वारा यह पुस्तिका प्रकाशित की गई है। हैल्पेज इन्टरनैशनल और यूरोपियन यूनियन के सहयोग से यह पुस्तिका प्रकाशित की गई है। इस पुस्तिका के लेखन में डॉ. एस॰ एस॰ कल्ला के सहयोग का धन्यवाद करती हूँ तथा इसके संकलन के लिए हैडकॉन संस्था और ग्राविस से जुड़े साथियों को धन्यवाद देती हूँ।

शशि त्यागी
सचिव

अनुक्रमणिका

(क) थार मरूस्थल और पशु पालन 5

(ख) प्रान्त में उपलब्ध पशुधन की मुख्य नस्लें 5

मुख्य नस्लें

- गौवशं 5
- पमुख विदेशी नस्लें 8
- बकरी – वंश 9
- भेड़ – वंश 11

(ग) पशु पालन प्रबंधन 12

- साधारण रोग 13
- संक्रामक रोग 24
- परजीवी रोग 30

(घ) पोषण 32

(ड) चारागाह विकास 34

(च) प्रजनन (वंश – वृद्धि) 35

Blank

(क) थार मरूस्थल और पशु पालन

देश के पश्चिमी भाग में करीब 10.40 प्रतिशत भू–भाग पर स्थित राजस्थान सूखे प्रान्तों में से एक है। राजस्थान का 62 प्रतिशत क्षेत्र रेगिस्तानी है और थार मरूस्थल के नाम से विख्यात है। क्षेत्र में वनस्पति के अभाव से जलवायु सूखे के समान होने के कारण अधिकतर वर्षा का अभाव व अकाल से पीडित रहता है। यहां का औसत तापमान 18^{0}–20^{0} (न्यूनतम) व 40^{0}–45^{0} (अधिकतम पाया गया है, व वर्षा औसतन 100–400 मि.लि. से कम ही होना पाया गया है। प्रान्त का मरूस्थलिय क्षेत्र मुख्यतः चार जिले बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर एवं जोधपुर हैं, जहां कि जलवायु करीब करीब समान है। क्षेत्र रेतीले धोरों के साथ कम वनस्पती वाला है व वर्षा के अभाव में अकाल से पीडित रहता है। वर्षा के अभाव से कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। ऐसी स्थिति में केवल पशु धन ही ग्रामीण की आर्थिक स्थिति को सम्बल देता है। पुराने इतिहास को देखे तो विदित होता है कि उस क्षेत्र में पर्याप्त मात्रा में चारागाह होने से कम खर्चे में उपलब्ध उन्नत पशुधन (विभिन्न नस्लें) का पालन पोषण होता था व प्रचुर संख्या में पशुधन उपलब्ध था। घी विक्रय की मण्डिया थी व देश के अन्य प्रान्तों में घी उपलब्ध कराया जाता था। दुध व दुध से बने पदार्थो के अलावा आदि उद्योगों का आधार पशु धन ही है।

पशुगणना 1997 के अनुसार राज्य में कुल 545 करोड़ पशुधन है। देश में मात्र राजस्थान ही ऐसा प्रांत है जहां की स्थानीय नस्ले अच्छे उत्पादन एवम् अच्छे श्रमिक बैल अन्य प्रान्तों को, ख्याती प्राप्त पशु मेले,–तिलवाड़ा, नागौर, परबतसर, सांचौर, रानीवाड़ा आदि के माध्यम से उपलब्ध कराता है। राज्य में देश का कुल दूध का 10 प्रतिशत बकरा मास का 30 प्रतिशत व ऊन का 30–40 प्रतिशत उत्पादन होता है तथा पशु पालन व्यवसाय से राज्य को करीब 19 प्रतिशत राजस्व प्राप्त होता है। उत्पादन की दृष्टि से देखा जावे राज्य में पशुधन अन्य देशों की तुलना में काफी कमजोर है। पशुपालन व्यवसाय अधिकांश आर्थिक दृष्टि से कमजोर लोगों के हाथ में चारागाह का क्षेत्रफल दिन व दिन घटना व अनुपात में अधिक पशु होने के कारण उनका सही प्रबंधन नहीं हो पा रहा है जिसका प्रतिकूल प्रभाव उत्पादन पर पड़ना स्वाभाविक है।

(ख) प्रान्त में उपलब्ध पशुधन की मुख्य नस्लें

गौवंश

(1) थारपार कर :

यह नस्ल मुख्यतः थार पार कर जिले (अब पाकिस्तान में) की है व वर्तमान में राजस्थान के बाड़मेर, जैसलमेर व जोधपुर जिले में पायी जाती है। इस नस्ल को सफेद सिंघण से भी जाना जाता है। यह नस्ल रेगिस्तानी जलवायु को सहन कर लेती है व रोग प्रतिरोधक क्षमता काफी अच्छे है। यह कम चारे व कम पानी पर भी निर्वाह कर लेती है। इसकी गाये अच्छा दूध देने वाली व बैल कृषि के लिये उपयोगी हैं।

पहचान :

- ❖ चेहरा लम्बा, सिर चौड़ा व उभरा हुआ।
- ❖ मध्यम कद
- ❖ छोटी, चमकती व कजरारी आंखे।
- ❖ सींग औसत आकार के
- ❖ रंग सफेद व कंधा व पूछो पर हल्का काला रंग
- ❖ पूंछ लम्बी व काले बालों के गुच्छे वाली
- ❖ अयन (आंचल) पूर्ण विकसित।
- ❖ विकसित मिल्क

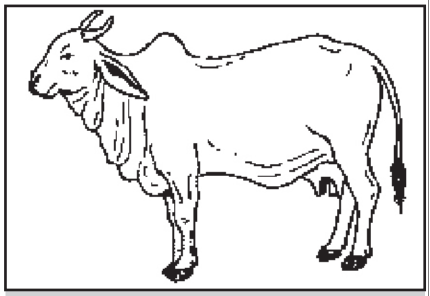

विशेष :

❖ मौसम के अनुकूल रंग बदलने की प्रवृति औसत दूध उत्पादन।
❖ 2500–3000 लीटर प्रति व्यात

राजस्थान में नस्ल सुधार हेतु पशु प्रजनन केन्द्र चांदन व सूरतगढ़ में उपलब्ध है।

(2) कांकरज :

इस नस्ल के पशु मुख्यतः गुजरात के सभी क्षेत्र में पाये जाते है । राजस्थान में यह नस्ल जालोर जिला, बाड़मेर की जालोर से लगती हुई सरहद, पाली व सिरोही के कुछ भाग में पाई जाती है। इस नस्ल के पशु द्री प्रयोजनीय है (गाय) दूध देने के साथ–साथ इस नस्ल के बैल खेती के लिये व माल ढोने के लिये काफी उपयुक्त है।

पहचान :

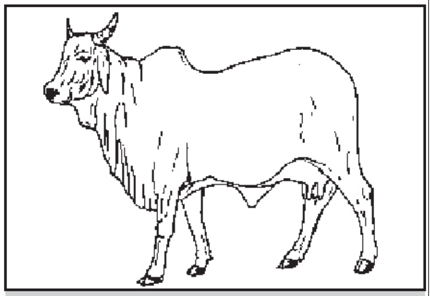

❖ शरीर बड़ा भारी होता है।
❖ चेहरा छोटा, नीचे से संकड़ा एवं नखूनों के ऊपर हल्का उठा हुआ होता है।
❖ कान लम्बे व लटकते हुए होते है।
❖ सींग मजबूत होते है एवं बाहर–पीछे सीधे सिर
❖ अन्दर की ओर मुडे हुए होते है।
❖ गर्दन छोटी व मोटी होती है।
❖ हम्प नर में पूर्ण तथा विकसित व मादा में छोटा होता है।
❖ रंग सोणा (Bay) होता है।
❖ पूछ पतली व पिछले टकनों से थोड़ी ऊपर काले रंग के बालों युक्त होती है।

विशेष :

औसत दूध उत्पादनः 1500–2000 लीटर प्रति ब्यात।

(3) गिर :

इस नस्ल के पशु मुख्यतः कठिया बड विशेषकर जूनागढ़ (गुजरात) के गिर जंगलों में पाये जाते है। राजस्थान में इस नस्ल के पशु अजमेर व अजमेर के आस पास पाये जाते है व अजमेरा नाम से पुकारे जाते है। कुछ भाग में उसे रेडी नस्ल भी कहते हैं।

पहचान :

❖ सर बड़ा व आगे से उभरा हुआ होता है।
❖ शरीर भारी होता है।
❖ सींग मोटे व पीछे की तरफ झुके हुए होते हैं।
❖ कान लम्बे व पत्ती के समान मुड़े हुए होते हैं।
❖ रंग लाल अथवा लाल–सफेद, लाल काले रंग के धब्बों से युक्त होता है।
❖ हम्प बड़े आकार का होता है व गल कम्बल/विकसित होती है।
❖ पूंछ काली व जमीन तक लटकती हुई होती है।
❖ गाय का आयम (आचंल) मध्यम आकार का एवम् लटकता हुआ होता है व थन लम्बे होते हैं।
❖ दूध में वसा (FAT) की मात्रा अधिक होती है।

औसत दूध उत्पादन :

❖ 2000–2500 लीटर प्रति ब्यात

(4) राठी :

यह नस्ल लाल सिंघों, शाही बाल कि मिश्रित नस्ल है। इस नस्ल के पशु बीकानेर, गंगानगर तथा उत्तरी पूर्वी भाग जैसलमेर क्षेत्र में पाये जाते है। गाये दुग्ध उत्पादन हेतु उपयोगी है।

पहचान :

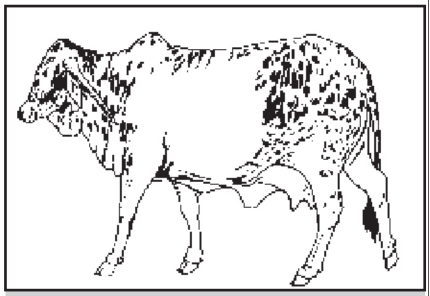

- ❖ गाय सीधे व भोले स्वभाव की होती है।
- ❖ रंग लाल, गहरा लाल के साथ काले व सफेद धब्बे होते है।
- ❖ गल कम्बल विकसित होता है।
- ❖ सीधे छोटे होते हैं।
- ❖ आयन (आंचल) विकसित और लटका हुआ होता है।
- ❖ थन लम्बे होते हैं।
- ❖ कान छोटे होते हैं।

औसत दुग्ध उत्पादन :

- ❖ 2000–25000 लीटर प्रति ब्यात।

(5) हरियाणा :

इस नस्ल के पशु पूर्वी राजस्थान में जयपुर, टौंक, सीकर जिले में पाये जाते हैं। इनका मूल स्थान हरियाणा होने के कारण हरियाणा नस्ल से जाना जाता है। इस नस्ल की गाये जहां संतोषप्रद दूध देती है। वहीं बैल खेती व माल ढोने में उपयुक्त है।

पहचान :

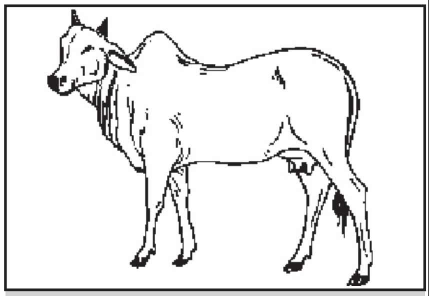

- ❖ रंग सफेद या हल्का ग्रे होता है।
- ❖ बदन गठीला व अच्छे अनुपात में होता है।
- ❖ विभिन्न प्रकार की जलवायु में निर्वाह कर सकता है।
- ❖ सिर ऊंचा उठा हुआ चेहरा लम्बा तथा नुकिला।
- ❖ सींग व कान अपेक्षा कृत छोटे।
- ❖ चमकदार बड़ी आंखे, छोटे कान पतली एवम् लम्बी गर्दन।
- ❖ अगले थन पिछले थनों से लम्बे।
- ❖ सर पर उभरी हुई हड्डी
- ❖ ये पशु बदलते व्यवहार से जल्दी चमक जाते हैं।

औसत दुग्ध उत्पादन :

1000–1500 लीटर प्रति ब्यात।

(6) नागौरी :

इस नस्ल के पशु राजस्थान के नागौर एवम् आस–पास के क्षेत्र में पाये जाते हैं। इस नस्ल के बैल चुस्त एवम् फुर्तिले होने के कारण कृषि कार्य के लिये प्रसिद्ध है। गाये कम मात्रा में दूध देती है।

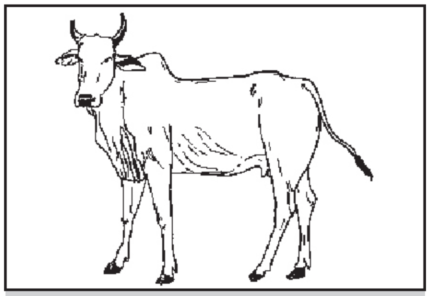

पहचान :

- रंग सफेद
- टांगे लम्बी व मजबूत
- विकसित हम्प
- त्वचा मुलायम
- पुट्ठे मजबूत, कमर सीधी व ललाट समतत्व

औसत दूध उत्पादन :

900 से 1000 लीटर प्रति ब्यात।

(7) मालबी :

इस नस्ल के पशु दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान के कोटा, झालावाड़ व उदयपुर जिले में पाये जाते हैं।

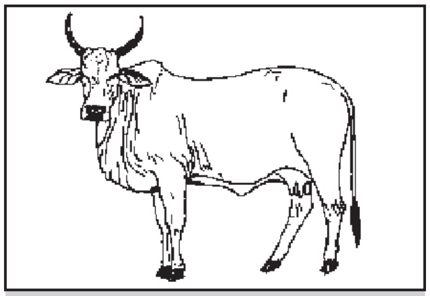

पहचान :

- आकार छोटा व गठिला।
- मजबूत टांगे।
- सीधी कमर व ढालू पुठ्ठे।

औसत दुग्ध उत्पादन :

1000–1200 लीटर।

प्रमुख विदेशी नस्ले (गौवंश)

(1) जर्सो :

मुख्यतः यह नस्ल अमेरिका की है। इस नस्ल की बछड़िया परिपक्व उम्र पर जल्दी आ जाती है व 1) वर्ष की उम्र में ग्यामिन हो जाती है।

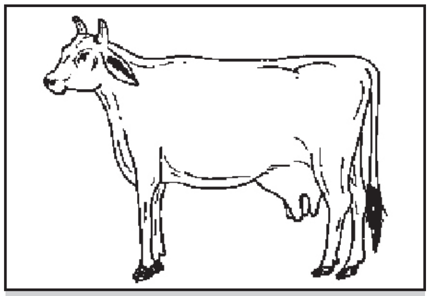

पहचान :

- मुख्यतः लाल, भूरा सफेद या मटमेला रंग होता है।
- सींग छोटे होते हैं।
- रीड की हड्डी सीधी होती है।

औसत दुग्ध उत्पादन :

2000 से 3000 लीटर प्रति ब्यात।

(2) होलस्टीन प्री फ्रीशियन :

मुख्यत अमेरिका की प्रजाती है।

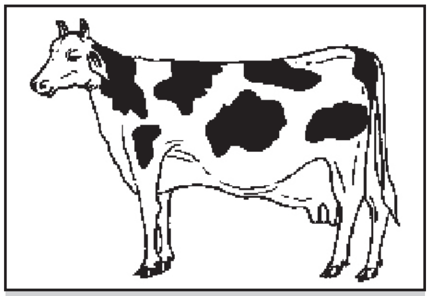

पहचान :

- रंग काला–सफेद होता है।
- शरीर भारी होता है।

औसत दुग्ध उत्पादन :

4000–6000 लिटर प्रति ब्यात।

(3) ब्राउन स्विस :

- ❖ रंग हल्का लाल व काला या गहरा लाल होता है।
- ❖ सींग छोटे छोटे होते हैं।

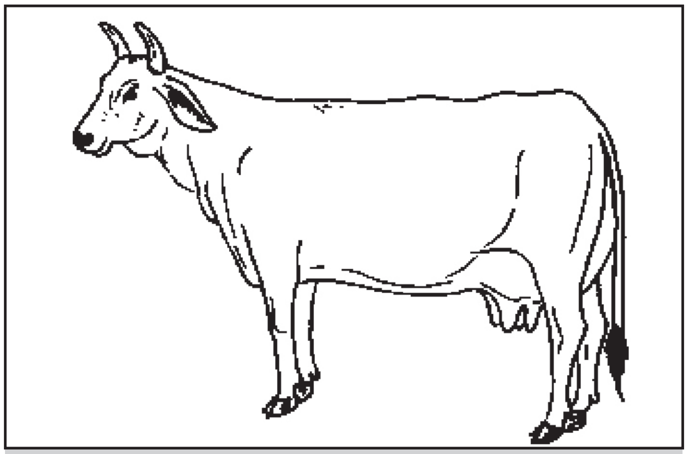

नोट : उपरोक्त प्रथम दो नस्लों के सांड से देशी गायों को ग्यामन कराया जाने से उनमें दूध उत्पादन क्षमता बढाई जा सकती है। चूंकि इनके पालन पोषण पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है। ऐसी स्थिति में इन नस्लों के पशु बड़े शहरों में या उसके आस–पास रखे जा रहे है। जहां पर्याप्त चिकित्सा सुविधा, उन्नत चारे के साथ–साथ दूध बेचने के लिये अच्छा बाजार उपलब्ध है।

बकरी-वंश

उचित रख–रखाव, पर्याप्त पड़त जमीन के कारण एवम् क्रय–विक्रय का आसान तरीका (तंत्र) उपलब्ध होने के कारण बकरी पालन राजस्थान में सर्वाधिक हैं यह पशु बहुउद्देश्य लाभ देने वाला पशु धन है, जिसके दूध, बाल व माल से आमद की होती है। उत्पादन के अनुसार इन्हें चार वर्गो में विभाजित किया जा सकता है।

(1) दुधारू नस्ले : बरबरी, सिरोही, जयलापारी, सूरती, मेहसाना।

(2) मांस उत्पादन की नस्ले : गद्दी, कच्छी, ब्लैक, बंगाल लोही।

(3) ऊन हेतु नस्ले : पश्मीना, अगोरा–राजस्थान में यह नस्ले नई पाई जाती है।

(4) द्विउद्देश्यीय नस्ल : बीतल, मारवाड़ी, सिरोही जमनापोरी।

राजस्थान में पायी जाने वाली बकरियों की नस्ले :

(1) मारवाड़ी :

उपलब्धता राजस्थान का मारवाड़ क्षेत्र।

पहचान :

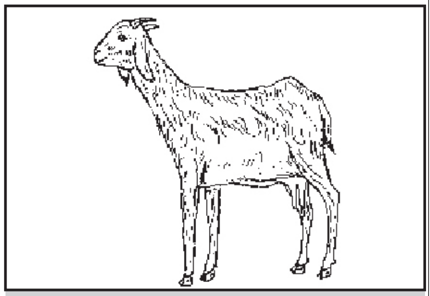

- ❖ काला रंग, लम्बे व घने बाल,
- ❖ छोटे कान, काले व सफेद धब्बों वाले कान,
- ❖ हिचकी के नीचे दाढ़ी,
- ❖ बडे सींग खल (Screw) खाये हुए
- ❖ मध्यम कद औसत व जन 35–40 कि.ग्रा

उपयोगिता :

दूध 55–60 मास व बाल दूध उत्पादन 0.9–1.2 कि.ग्रा.प्रतिदिन।

(2) सिरोही :

उपलब्धता राजस्थान का सिरोही जिला एवम् गुजरात का कुछ भाग।

पहचान :

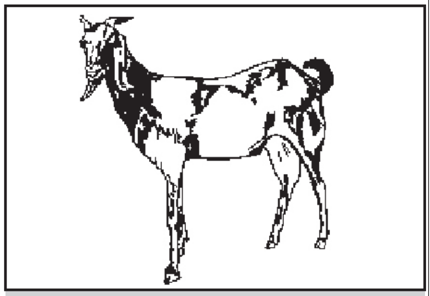

- ❖ रंग भूरा, बाल व सफेद
- ❖ शरीर पर घने पर छोटे बाल,
- ❖ बदन गठा हुआ
- ❖ मध्यम कद
- ❖ औसत वजन 40–50 कि.ग्रा.
- ❖ लम्बे लटके हुए कान।

उपयोगिता :

दूध व मांस।

(3) बरबरी :

उपलब्धता–प्रायः राज्य के सभी भागों में पर मुख्यतः यू.पी. के एटाह, आगरा, मथुरा, अलीगढ़ जिला में।

पहचान :

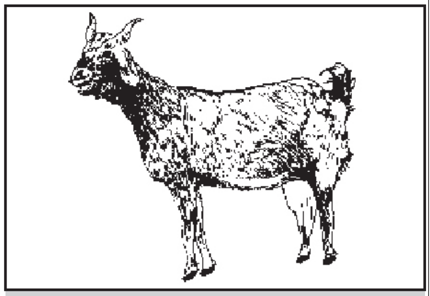

- ❖ कद छोटा व रंग सफेद व भूरा।
- ❖ सींग सीधे।
- ❖ कान छोटे।
- ❖ आयन (Udder) लटका हुआ।
- ❖ परिपक्वता पर औसत वजन 35–40 कि.ग्रा.।

उपयोगिता :

दूध 0.8 से 1.3 लीटर प्रतिदिन।

(4) अलवरी :

उपलब्धता–अलवर, भरतपुर, जयपुर एवम् इसके आस–पास।

उपयोगिता :

दूध

बकरी की विदेशी नस्लें

नस्ल	देश		नस्ल	देश
1. एलपाईन	फ्रांस	2.	न्यबंग	सूडान
3. सानेन	स्वीटजरलेंड	4.	रोगनवर्ग	स्वीटजरलेंड

भेड़वंश

राजस्थान में भेड़ों की मुख्य नस्लें

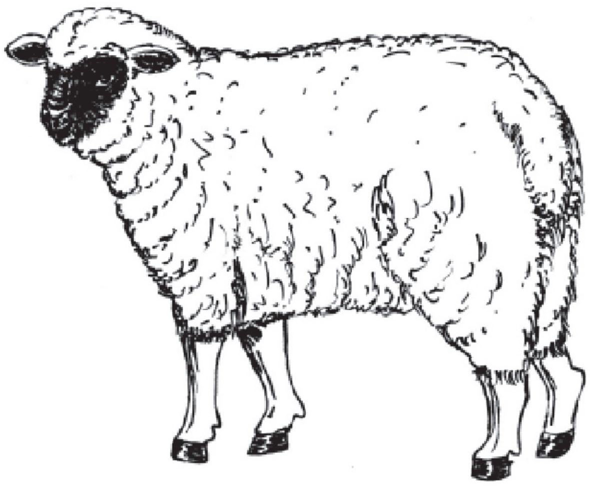

चोकला	:	(शेखावाटी नस्ली) चूरू, सीकर, झुनझुनू जिला।
जैसलमेरी	:	जैसलमेर, बाड़मेर जोधपुर जिला।
मगरा	:	नागौर, बीकानेर जिला।
मालपुरा	:	सवाई माधोपुर जिला
मारवाड़ी	:	जोधपुर, जैसलमेर, बाड़मेर जालोर।
नाली	:	बीकानेर, गंगानगर।
पूंगल	:	पूगल तहसील जिला बाड़मेर।
सोनाड़ी	:	बांसवाड़ा, भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़, डूंगरपुर व उदयपुर जिला।

(ग) पशु पालन और प्रबंधन

पशुपलान एक अच्छा व्यवसाय है जो अकाल स्थिति में (वर्षा के अभाव में) ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को सम्बल देने में पूर्ण योगदान देता है। यदि अच्छा प्रबंधन होगा तो पशु पालक इस व्यवसाय से अधिक लाभ उठा सकेगा।

प्रबंधन–मुख्य बिन्दु :

(1) रक्षण

(2) पोषण

(3) सर्वधन एवं प्रजनन

(4) विपणन

रक्षण :

पशु उत्पादन तभी देगा जब उसे पार्याप्त रक्षण व सुरक्षा उपलब्ध करायी जावेगी।

(क) रख–रखाव :

1. उचित स्थान का चयन।
2. पर्याप्त मात्रा में हवा, रोशनी की व्यवस्था हो।
3. सर्दी, गर्मी व वर्षा से बचाव है।

नोट : एक गाय को करीब 50–60 वर्ग फीट व एक बकरी/भेड़ को 10.15 वर्ग फीट जगह उपलब्ध कराना उचित होगा। जिसमें गाय का चारा डालने की जगह जमीन से 2(.2) फीट ऊंचा, 2–2) फिट चौड़ा, खडे होने का स्थान 5–7 फीट (पशु के नस्ल के अनुसार) व 6''–1 लीटर गोबर एवम् मूत्र आधी की निकासी के लिये नाली हो। पशुओं को इस प्रकार खड़ा रखे जिससे दोनों पशुओं को पूछे आमने सामने हो जिससे सक्रमण से बचा जा सके।

(ख) रोगों से बचाव :

पशु मूक प्राणी होने से अपनी व्याधी बया नहीं कर सकता है अतः निम्न लक्षणों से बीमार पशु को पहचाना जा सकता है।

(1) गाय भैस आदि जुगाली करने वाले पशुओं जुगाली बन्द करना।

(2) चारे–दाने के प्रति अरूचि।

(3) सामान्य तापक्रम व स्वास्थ गति में परिवर्तन (कम या अधिक)

(4) आख, कान, नाक, मुंह, योनी से तरल पदार्थ का आना।

(5) पशु का सुस्त रहना व अन्य पशुओं से अलग रहना।

(6) पशु के चलने में कठिनाई होना।

(7) उत्पादन में कभी होना।

(8) आंखे व चमड़ी चमकदीन होना।

पशुओं के सामान्य ताप, स्वास व नाडी गति :

किस्म पशु	तापमान	स्वास/मिनट	नाड़ी की गति/मिनट
गाय	101.5^{o}F (38.5^{o}C)	10–30	60–80
भेड़	102.5^{o} F (39^{o}C)	10–20	70–80
बकरी	103^{o} F (39.5^{o}C)	25–35	70–80

पशुओं में रोग : दो प्रकार के रोग पाये जाते हैं–

(1) साधारण – रोग (2) सक्रामण – रोग

साधारण रोग

वे रोग जो छूने से नहीं फैलते साधारण रोग की परिभाषा में आते हैं।

1. अपच : (बदहजमी)

पशु की पाचन क्षमता खराब होने से अपच अथवा बदहजमी होती है व ग्रहण किया हुआ आहार पचता नहीं है।

लक्षण :

(1) चारा पानी लेना कम कर देना अथवा बन्द करना।

(2) जुगाली नहीं करना।

(3) स्वास प्रक्रिया, तापमान व नाड़ी की गति सामान्य न होना।

(4) उत्पादन में कमी।

(5) पशु का सुस्त रहना व थकना।

(6) कभी–कभी आफरा आना।

(7) कभी–कभी कब्ज या पतला गौबर करना।

कारण :

(1) दूषित आहार (चारा–दाना) व पानी का ग्रहण करना।

(2) चारे, दाने व मौसम में अचानक परिवर्तन होना।

(3) अधिक मात्रा में आहार ग्रहण करना।

(4) कम मात्रा में पानी ग्रहण करना।

(5) पेट में कीड़े (क्रमनासक) होना।

(6) अस्वाध्य पदार्थो का सेवन करना जैसे कागज, गौबर, आवल, सड़ी हुई खाद्य सामग्री व प्लास्टिक आदि का ग्रहण करना।

उपचार :

(1) रोग के कारण का पता लगाया जाकर उपचार करें।

(2) पशु को साफ पानी पिलाना।

(3) पशु को दुषित चारा पानी न देवे।

(4) पेट में कीड़े हो तो क्रमिनासक औषधी देवे।

(5) पशु को नियमित घुमावें।
(6) पाचन क्रिया के सुधार के लिये हिमालय बत्तीसा 60–70 ग्राम दिन में बार देवे।
(7) एनारेक्सोन, बया बायोबूस्ट या रयमेन्टोन की 2 गोली प्रतिदिन के हिसाब से 3 दिवस देवे।
(8) कब्ज के लिये अरण्डी का तेल 100–150 मि.ली. दे।
(9) आवश्यकता पड़ने पर चिकित्सक से परामर्श करें।

2. सफेद दस्त (White Scoer in claves)

यह रोग ''बी'' कोलाई जीवाणु छोटे बछड़ा/बछडत्री में होता है (जन्म से प्रथम 2–3 सप्ताह)

कारण :
1. बछड़ा /बछड़ी को खीस ;ब्वसवेजतनउद्ध कम पिलाने से रोग निरोधक क्षमता की कमी के कारण।
2. अधिक मात्रा में दूध पिलाना।
3. पशु रखने के स्थान पर सफाई का अभाव।

लक्षण :
1. सफेद या हल्के पीले रंग की दस्त होना।
2. बछड़े का कमजोर होना।
3. बछड़े द्वारा मिट्टी खाना।
4. बछड़ों में मृत्यु दर ज्यादा होना।

बचाव एवं उपचार :
1 पशु रखने के स्थान को साफ रखे।
2 बछड़ा/बछड़ी को पर्याप्त मात्रा में धीरे–धीरे खीस पिलावे।
(3) अधिक दूध एक साथ नहीं पिलावे।
(4) सल्फाडाई मिडिन 1 ग्राम दिन में तीन बार तीन दिवस तक देवे।
(5) चिकित्सक के परामर्श अनुसार एन्टीबायोटिक देवे।

3. आफरा, अफारा (डमरी) :

इस रोग में पशु का पेट फूल जाता है यदि समय पर चिकित्सा न की जाती है तो पशु की मृत्यु भी हो सकती है।

कारण :
(1) दूषित भोजन व पानी ग्रहण करना।
(2) भोगा हुआ या फफून्द लगा हुआ चारा।
(3) अचानक चारे में बदलाव होना।
(4) जंगल में कोई विशेष प्रकार की घास ग्रहण करना।
(5) कार्य करने के बाद ठण्डा पानी पीना।
(6) एक करवट पर अधिक समय रहना।
(7) अहार नली में रूकावट होना।
(8) पेट में अखाद्य पदार्थ जेसे प्लास्टिक चमड़ा आदि का होना।
(9) कुछ खाद्य सामग्री से एलर्जी होना।

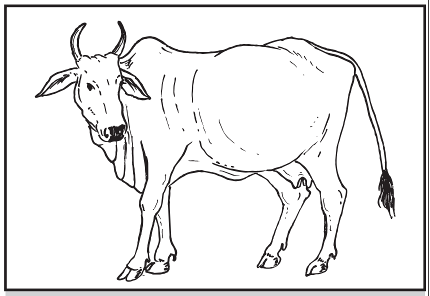

लक्षण :

(1) पेट फूलना

(2) पेट थपथपाने पर ढोल जैसी आवाज आना।

(3) पशु का बेचेन होना।

(4) खाना, पानी व जुगाली का बन्द होना।

(5) आखों से पानी व मुंह से लार टपकना।

(6) स्वास लेने में तकलीफ होना।

(7) कब्ज होना।

(8) कभी–कभी पैशाब का बन्द होना।

(9) पेट में दर्द के कारण पेरों का पेट पर मारना व मुंह पेट की तरफ करना।

उपचार :

(1) पशु को धीरे–धीरे घुमावें।

(2) पशु को इस प्रकार खड़ा रखे जिससे अगले भाग ऊँचा व पिछला भाग नीचा रहे।

(3) मुंह में लकड़ी का टुकड़ा रखे जिसके दोनों घिरों पर बंधी हुई डोरी (रस्सी) को सींगों से बांधने।

(4) पेट पर मालिश करें।

(5) तारपीन का तेल 50 मि.ली. में 5–10 ग्राम हींग मिलाकर पिलावे।

(6) कोयले का पाउडर 100 ग्राम मीठा सोड़ा 30–50 ग्राम सेठ 8–10 ग्राम बाजरी या गेहूं के आटे में मिलाकर चटनीनुमा बनाकर चटावे।

(7) ब्लोटोघिल दवा 100 मि.लि. पिलावे।

(8) पेट में दर्द होने पर पेट पर गर्म पानी की बोतल से सेक करे, स्वास मिडोनया बेरालगान की गुड़ के साथ मिलाकर खिलावे।

(9) गंभीर स्थिति में चिकित्सक से परामर्श करें।

4. कब्ज :

गौबर न करना अथवा गौबर निकलने में कठिनाई होना।

कारण :

(1) शुष्क आहार का अधिक मात्रा में सेवन।

(2) पानी की कमी।

(3) अधिक मात्रा में आहार ग्रहण करना।

(4) व्यायाम का अभाव।

(5) भोजन में रेशेदार पदार्थो की कमी।

(6) सड़ा गला, मिट्टीयुक्त एवम् अखाद्य पदार्थो का सेवन।

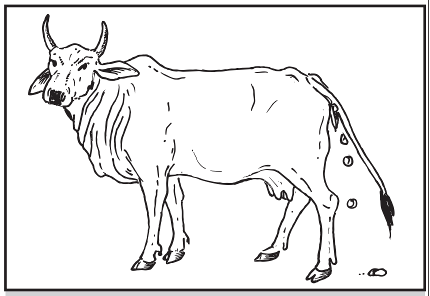

लक्षण :

(1) मल त्याग कष्ट प्रद।

(2) मल में दुर्गंध व आव आना।

(3) पेट में दर्द होना।

(4) श्वास में बदबू आना।

(5) पशु का कमजोर होना।

(6) चमड़ी का सूकना।

उपचार :

(1) चिकनाई युक्त (तिलि का तेल, या अलसी का तेल) अथवा सरसों का तेल हाथ गुदा में डालकर गौबर को बाहर निकाले।

(2) साबुन के पानी (डिटरजेंट साबुन काम में न ले) से एन्जिमा देवे।

(3) गुनगुने पानी में (बड़ पशु के लिये) 300 ग्राम मेगसेल्फ 100—150 ग्राम अलसी का तेल पानी का आवश्यकतानुसार मिलाकर धीरे—धीरे पिलावे।

(4) पशु को धीरे—धीरे घुमावें।

(5) हिमालय बतीसा 70 ग्राम मेघसल्फ 300 ग्राम गुनगुने पानी में मिलाकर दिन में दो बार पिलावे।

(6) अरण्डी का तेल 100—200 मि.लि. पिलावे।

(7) नियमित रूप से 50—70 ग्राम साधारण नमक यदि रोजाना पानी अथवा दाने के साथ दिया जावे तो कब्ज होने की सम्भावना कम होगा।

5. पाईका (अखाद्य पदार्थो का सेवन)

चारे दाने में पौष्टिक तत्वों की कमी होने पर पशु अखाद्य पदार्थ जैसे प्लास्टिक, चमड़ा, मिट्टी आदि खाता है एवम् स्वयम् अथवा दूसरे पशुओं का मल एवम् मूत्र भी ग्रहण करता है, इस व्याधी (बीमारी) को पाईका कहते हैं।

कारण :

(1) फौस फोरस व केल्सियम की कमी।

(2) आहार में नमक की कमी।

(3) पशु का अधिकतर छाया अथवा अंधेरी जगह पर रहना (घुम का अभाव)

उपचार :

(1) प्रतिदिन 50—70 ग्राम नमक खिलावे।

(2) पशु को पर्याप्त धूप उपलब्ध करावे।

(3) लक्षणयुक्त ईट पशु के ठाण में रखें।

(4) दाने के साथ मिनरल मिक्सचर मिलावे।

(5) यूरिया मोलेसिस ईट का उपयोग भी लाभकारी है।

(6) चिकित्सक से परामर्श करें।

6. दस्त लगना या पतला गौबर करना :

कारण :

(1) दूषित चारा दाना खाना।

(2) सड़ा गला आहार लेना।

(3) विशेष पदार्थ खाना।

(4) अधिक मात्रा में चारा खाना।

(5) पर जोवो से पीड़ित होना।

(6) सक्रामक बीमारी के कारण।

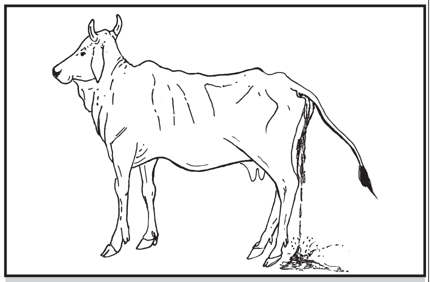

लक्षण :

(1) बदबूदार पतला गौबर करना।
(2) पशु का आहार व पानीग्रहण करना बन्द करना।
(3) पशु का दुर्बल होना।
(4) पशु में पानी की मात्रा कम होना।

उपचार :

(1) विशेला पदार्थ खाया हो तो 100–150 मि.लि. अरण्ड का तेल पिलावे जिससे पेट साफ हो जावे।
(2) 0.1 प्रतिशत 0.3 प्रतिशत पोटेशियम परमेंगनेट का घोल पिलावे।
(3) कत्था 40 ग्राम, सोठ 20 ग्राम, चॉक पाउडर 70 ग्राम पोस्ट के डोडे (यदि उपलब्ध हो तो) 5–7 ग्राम मिश्रित कर चार बराबर मात्रा में सुबह शाम पानी के साथ पिलावे।
(4) हल्का सुपाच्य चारा दाना देवे।
(5) शरीर में पानी की कमी होने पर पशु चिकित्सक से परामर्श करे।

7. आहार नली में (भोजन नली) में रूकावट :

कारण :

(1) आहार नली पर बाहरी चोट।
(2) नुकिले पदार्थो का सेवन।
(3) अधिक गर्म अथवा ठण्डा आहार लेना।
(4) ठासे खाद्य पदार्थ जैसे गाजर, मूली, गन्ने के टकुड़े आदि का आहार नली में फंसना।
(5) तेजाबीय पदार्थो का सेवन।

लक्षण :

(1) आहार नली में भोजन।
(2) पशु के चारा, दाना अािवा पानी के निगलने में कठिनाई होना।
(3) मुंह से तरल पदार्थ गिरना।
(4) पशु की जुगाली बन्द होना।
(5) पशु का सुस्त होना।

उपचार :

(1) आहार नली में कोई ठोस सामग्री अटकी हुई हो तो हाथ से आगे पीछे कर आहारनली से बाहर या पेट में उतारने का प्रयास करें।
(2) पशु को गुनगुना पानी धीरे–धीरे पिलावे।
(3) यदि मुंह खोलने पर कोई वस्तु नजर आवे तो माउथ गैग लगाकर हाथ अथवा औजार (चिमटी) से निकालने का प्रयास करें।
(4) आहार नली पर गर्भ सेक करे।
(5) चिकित्सक से परामर्श करें।

8. मुंह में छाले होना :

कारण :

(1) चोट लगना मुंह में घाव होना।

(2) गर्भ आहार अथवा तेजाबों पदार्थ का सेवन करना।

(3) नुकिले चारे आदि का सेवन करना।

(4) फफूंद अथवा संक्रामित आहर का सेवन करना।

(5) कब्ज होना।

(6) खुर पका–मुंह पका रोग होना।

(7) चेचक रोग का होना।

लक्षण :

(1) मुंह से लार गिरना।

(2) मसूड़ों में सूजन आना।

(3) मुंह से बदबू आना।

(4) चारा दाना ग्रहण करने में कठिनाई आना।

(5) बुखार होना।

(6) कभी–कभी फफोले व घाव होना।

उपचार :

(1) 0.1–0.2 प्रतिशत पोटेशियन परमेगनेट के पानी से मुंह धोवे।

(2) बोरो 5 लीसरीन घाव पर लगाते।

(3) पशु को तरल पदार्थ जैसे चावल की माड़, दलिया ठण्डा कर खिलावे।

(4) थोड़ी 2 मात्रा में हरा चारा कुतर कर खिलावे।

(5) मोठ की रोटी तिल्ली के तेल में चुपड़ कर खिलावे।

(6) चिकित्सक से पदामर्श कर एक्टीबायोटिक आदि का उपयोग करें।

9. जुकाम :

कारण :

(1) अचानक मोसम में बदलाव।

(2) तेज व शर्द हवाओं के कारण।

(3) धूआ, धूल व विशेली गैस के कारण।

(4) फफूद, विषाणु अथवा जीवाणु के कारण

(5) वातावरण में तीखी गंधे के कारण

(6) एलर्जी होना।

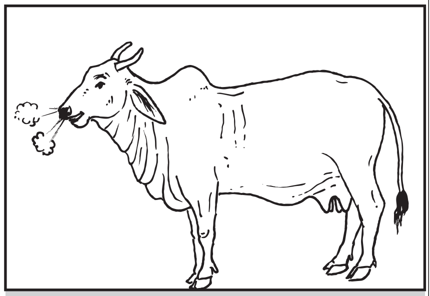

लक्षण :

(1) नाक, पीला, सफेद स्त्राव आना।

(2) खासी आना।

(3) सास लेने में कठिनाई।

(4) आंखों से पानी गिरना।

(5) बुखार होना।

(6) पशु का सुस्त होना व चारा दाना ग्रहण करने में अरूचि होना।

उपचार :

(1) नथूनों को गुनगुने पानी से साफ करें।

(2) नाक में 1–2 बूंदे तारपीन के तेल की बून्दे डाले।

(3) यूकिलिप्टिस् के तेल की 5–7 बूंद एक बाल्टी गर्म पानी में डालकर उसकी भाप पशु को देवे।

(4) पशु के नथूनों पर विक्स अथवा बाम भी लगाई जा सकता है।

10. खासी (ब्रोन्काइटिस) :

कारण :

(1) अचानक मौसम परिवर्तन जुकाम व बाद में तेज खासी हो सकती है।

(2) धूल, कचा, तेज गन्द, विशेले धुए के कारण।

(3) विशेष पदार्थ से एलर्जी के कारण।

(4) विषाणु अथवा जीवायु के कारण।

(5) सर्द हवा एम् ठण्ड

(6) लम्बी बीमारी जैसे टी.बी.आदि।

लक्षणः

(1) पहले सूखी व बाद में गिली खासी होना।

(2) नाक से सफेद पीला अथवा हरा पीला स्त्राव आना।

(3) खाने में अरूचि

(4) खसन गति में वृद्धि।

(5) पशु का सुस्त होना।

(6) बुखार (साामान्य से तापमान ज्यादा) होना।

(7) उत्पादन में कमी।

उपचार :

(1) पशु को स्वच्छ तथा खुले वातावरण में रखे।

(2) पशु को तेज ठण्ड से बचावे।

(3) तारपीन के तेल अथवा युवेलिपटिस के तेल की 5–7 बूंद गर्म पानी में डालकर वाष्प देवे।

(4) काली मिर्च 50 ग्राम सोठ 25 ग्राम लोंग– 3–4 मुलहटी 20–25 ग्राम नौसादर 10 ग्राम पीपरमेन्ट 1–2 ग्राम गुड़ (आवश्यकता अनुसार) मिलाकर दिन में 2–3 बार चटावें।

(5) तारपीन का तेल 1 भाग तिल्ली या सरसों का तेल 2 भाग, पानी चार भाग कपमर की टिकिया (करीब 5 ग्राम) अच्छी तरह मिलाकर पसलियों पर दिन में 2–3 बार मालिश करें।

(6) चिकित्सक से परामर्श करें।

11. न्यूमोनिया

यह स्वसन सम्बन्धी रोग है यदि सर्दी से बचाव न किया जाता है व खासी आदि को नजर अन्दाज किया जाता है तो उस रोग की संभावना बढ़ जाती है।

कारण :

(1) ज्यादा सर्दी व बारिश में पशु का खड़ा रहना।

(2) गलत तरीके से दवा पिलाना।

(3) अचानक मौसम में परिवर्तन होना।

(4) पशुशाला में निरन्तर गन्दगी रहना।

(5) परजीवी के कारण।

(6) पशु के अत्यधिक कमजोरी के कारण।

(7) जीवाणु अथवा विषाणु के कारण।

(8) रोगी पशु के साथ रहने के कारण।

लक्षण :

(1) सामान्य से ज्यादा तामापन होना (बुखार आना)

(2) फेफड़ों व्याधी होने के कारण सांस लेने में कठिनाई।

(3) पशु शरीर में कम्पन्न होना।

(4) खांसी के साथ कफ तथा बलगम में खून आना।

(5) नाक से पीला, हरा पीला बदबूदार स्त्राव आना।

(6) हाफनी (दम) होना।

(7) पशु का बेचेन होना व चारा—दाना—पानी ग्रहण न करना।

(8) उत्पादन में कमी होना।

उपचार :

(1) पशु को ठण्डी हवा व बरसात से बचावे।

(2) गुनगुना पानी पिलावे।

(3) पशु के शरीर को बोरी के टाट से ढक कर रखे।

(4) तारपीन के तेल या यूकलिपटिस के तेल की वाष्प देवे।

(5) काली मिर्च, सोठ लोंग, पीपरमेंट मुलहटी नौसादर, सल्फाइर्डमिडि का गौल 59 ग्राम व गुड़ के साथ चटनी बनाकर दिन में 2 बार चटावें।

(6) वास लेने तकलीफ के लिये नाक में तारपीन के तेल की 2—3 बूंद या युकलिपटिस तेल की 2—3 बंद डाले।

(7) तारपीन का तेल 1 भाग तिल्ली या सरसों का तेल 2 भाग पानी चार भाग कपूर 5 ग्राम (एकटिकिया) अच्छी तरह से मिलाकर पसलियों व गर्दन पर मालिश करें।

(8) तत्काल चिकित्सक से परामर्श करें।

12. दम होना (हाफना) :

इस बीमारी में श्वास लेने में कठिनाई होती है।

कारण :

(1) विभिन्न पदार्थ एवम् धुंआ आदि से एलर्जी

(2) न्यूमोनिया से ग्रसित होना।

(3) पशु का अत्याधिक कमजोर होना।

(4) लम्बी बीमारी विशेषकर खुरपका–मुंहपका रोग के बाद।

लक्षण :

(1) सांस लेने में कठिनाई।

उपचार :

(1) विटामिन ए युक्त आहार–जैसे गाजर, मच्छी के तेल को दाने आदि में मिलाकर देना।

(2) पर्याप्त मात्रा में धूप सेवन करावे।

(3) प्रतिदिन 50–60 ग्राम नमक देवे।

(4) चिकित्सक से परामर्श करें।

13. एनिमिया (रक्त की कमी) :

कारण :

(1) रक्त में लाल कणिकाओं को कमी के कारण।

(2) पौष्टिक आहार की कमी के कारण।

(3) लम्बी बीमारी के कारण।

लक्षण :

(1) शरीर का पीला, दुर्बल होना।

(2) आंखों का सफेद होना।

(3) शीघ्र थकावट आना।

(4) शरीर का तापमान समान्य से कम होना।

(5) शरीर में कंपकंपी होना।

(6) चलने में व उठने बैठने में परेशानी होना।

उपचार :

(1) लोहयुक्त पदार्थो का सेवन करना जैसे गुड़ को लेहे की कढ़ाई में पानी के साथ गर्भ कर पिलावे। जैसे गुड़ को लोहे की कढ़ाई में पानी के साथ गर्भ कर पिलावे।

(2) भोजन में हरे चारे की मात्रा बढ़ावे।

(3) सुपाच्य भोजन देवे।

(4) चिकित्सक से परामर्श अनुसार टोनिक व इन्जेक्शन देवे।

14. लू–लगना :

कारण :

(1) यह रोग अधिकतर गर्मियों में होता है।

(2) गर्म हवाओं के कारण।

(3) धूप में ज्यादा खड़ा रहने के कारण।
(4) पानी की कमी के कारण।

लक्षणः

(1) पशु का सुस्त रहना।
(2) तापमान अत्यधिक बढ़ जाना।
(3) जीभ सूचना।
(4) नाक व मुंह से झागयुक्त स्त्राव आना।
(5) पशु का बेचेन होना।
(6) आंखे लाल होना।
(7) लड़खड़ाते हुए चलना।
(8) चमड़ी में सुखापन होना।
(9) कभी–कभी मुर्छा अथवा बैहोश होना।

उपचार :

(1) पशु खुली, ठण्डी छायादार स्थान पर रखे।
(2) सिर पर ठण्डे पानी के झारे देवे।
(3) ठण्डे पानी से नहलावे।
(4) ठण्डा पानी पिलावे नमक मिलाकर देवे।
(5) तत्काल चिकित्सक से परामर्श करें।

15. मिल्क फीवर :

यह रोग अधिकतर ज्यादा उत्पादन देने वाले पशुओं में कैल्सियम की कमी के कारण होता है। प्रायः सदैव ऋतु में उसका प्रकोप ज्यादा पाया गया है। व कभी–कभी मूर्छित भी हो जाती है। यदि समय पर चिकित्सा व्यवस्था न की जावे तो पशु की मृत्यु हो सकती है।

कारण :

(1) पशु को दिये जाने वाले आहार में कैल्सियम की कमी व व लाने के बाद खोज अत्यधिक मात्रा में निकालना।
(2) पशु के ब्याने तक दूध निकालना।
(3) पशु के रख–रखाव में कमी।

लक्षण :

(1) पशु का एकदम कमजोर होना व खड़े होने व बैठने में असमर्थ होना।
(2) पशु का चारा दाना लेना बन्द कर देना।
(3) पेर कड़े होना।
(4) तापमान में कमी होना।
(5) पशु का एक तरफ गर्दन डालना।
(6) बच्चे को दूध नहीं पिलाना।
(7) आंचल (आयन) में दर्द महसूस करना।

उपचार :

(1) तत्काल चिकित्सक से परामर्श कर केलसियम के इंजेकशन लगावे।
(2) ब्याने के पहले पशु को विटामिन डी व केलसियम युक्त संतुलित आहार देवे।

(3) श्वास को अधिक मात्रा में न निकाले।
(4) गुड़ का गर्म पानी धीरे–धीरे पिलावे।
(5) गर्भावस्था में 25–50 ग्राम नौसादर पानी में मिलाकर दिन में 2 बार देवें।

16. जोड़ (Parotid Absces) :

इस बीमारी में पशु के जबड़े के नीचे अथवा गर्दन के पास एक या अधिक गंठ हो जाती है जो बाद में पक जाती है व उसमें रस्सी (मवाद) हो जाती है। यह बीमारी अक्टूबर से फरवरी माह में ज्यादा होती है।

कारण :

(1) आयोडीन की कमी।

लक्षण :

(1) पशु के जबड़ों के नीचे गाठ होना।
(2) गाठ का पकाव होने पर मवाद पड़ना।
(3) गाठ के फूटने पर वापस उसी स्थान पर या अन्य स्थान पर गाठ होना।
(4) पशु का सुस्त रहना।
(5) उत्पादन में कमी।

उपचार :

(1) गाठ के पकने पर मवाद निकाल दें।
(2) पोटेशियम परमेगनेट के 0.5 प्रतिशत पानी से गांठ को अन्दर से साफ करों।
(3) गाठ के अन्दर की जगह पर पोवीडीन या तेज पोटेशियम परमेगनेट लगावे।
(4) गाठ के अन्दर नमक की डली अथवा सलफाईमिडिन की गोली रखें।
(5) आयोडीनयुक्त नमक खिलावे।
(6) चिकित्सक से परामर्श करें।

17. रतौन्दी (Night blindness)

पशु आहार में विटामिन । की कमी से यह रोग हो जाता है। विशेषकर अकाल स्थिति में इसका प्रकोप अधिक पाया जाता है। विटामिन । नेत्र ज्योति, शरीर की वृद्धि हड्डियों के विकास, भ्रूण विकास एवम् प्रजनन क्षमता विकसित करने के लिये आवश्यक है।

लक्षण :

(1) पशु की रात्रि में दिखाई देना बन्द होना।
(2) आंखों से पानी गिरना व कभी–कभी गढा पीला स्त्राव आना।
(3) चमड़ी सूखी दरदरी होना।
(4) रोग प्रतिरोधक क्षमता कम होना।

उपचार :

(1) पशु पर्याप्त मात्रा में हरा चारा देवे।
(2) मछली का तेल 1–2 चम्मच दूध में मिलाकर पिलावे।
(3) गाजर के छोटे–छोटे टुकड़े कर खिलावे।
(4) बड़े पशुओं को विटामिन । के इंजेक्शन दवे।
(5) नवजात बछड़ों को खीस (कोलेस्ट्रम) पिलावें।
(6) हरे चारे के साथ फिसमील मिलाक खिलावे।

संक्रामक रोग :

वे रोग जो सुक्षम कीटाणु (बेक्टीरिया, वायरस आदि) से उत्पन्न होते है एवं पशु से दूसरे पशु के सम्पर्क द्वारा फैलते हैं उन्हें संक्रामक रोग कहते हैं।

1. गलघोटू :

यह रोग पासच्यूरिला जाति के जीवाणु द्वारा होता हैं यह रोग अधिकतर वर्षा ऋतु में बूंदाबांदी के बाद अथवा हवा लम्बे समय तक नमी ज्यादा होने बादल होने से होता है। सफेद पशुओं की तुलना में काले पशु जैसे भैस वंश को ज्यादा प्रभावित करता है।

लक्षण :

(1) गले व मुंह में सूजन।

(2) तेज बुखार (103°C – 105°C)

(3) आखें लाल होना।

(4) श्वास लेने में तकलीफ होना।

(5) नाक से झाग आना व गाठे सफेद रंग स्त्राव आना।

(6) मुंह से लार पड़ना।

(7) जबान पर सूजन आना।

(8) पेट में पीड़ा होना

(9) 24–48 घण्टों में पशु की मृत्यु होना।

बचाव व उपचार :

(1) वर्षा ऋतु से पहले टीकाकरण कराना।

(2) पशुशाला को साफ रखना।

(3) बीमार पशु को तुरन्त स्वस्थ पशुओं से अलग करें।

(4) बीमार पशु द्वारा ग्रहण किया हुआ चारे दाने का बचा हुआ अंश जलाकर नष्ट कर दे जिससे अन्य पशुओं में बीमारी का प्रकोप न हो।

(5) दूषित चरागाह पर पशुओं को चरने न दें।

(6) खाने के लिये पशु को जौ दलिया दे व पर्याप्त पानी पिलावे।

(7) पीने के पानी में पोटेशियम परमेगनेट मिलावे।

(8) मरे हुए पशु का जमीन में गहरा खोद कर गाढ़ दें।

(9) सल्फाडाईमिडिन की 5 ग्राम, 2 गोली दिन में 2 बार 3–5 दिवस तक देवें।

(10) पशु चिकित्सक की तत्काल सेवायें ले।

2. लंगड़ा बुखार (फड़ सूजन, काला य कालिय वाय)

कारण :

यह रोग क्लोस्ट्रीडियम जाति के जीवाणु द्वारा होता है। व ाा ऋतु अथवा अधिक नमीके मौसम में इसका प्रकोप ज्यादा होता है। सफेद रंग के पशु (गाय) को यह रोग ज्यादा ग्रसित करता है।

लक्षण :

(1) तेज बुखार होना।

(2) चारा पानी लेना बन्द कर देना।

(3) लगड़ाकर चलना अथवा चलने में असमर्थ होना।
(4) पेर के निचले भाग, बाद में उपरी भाग, पुट्ठो एवम् कंधों पर सोजन आना।
(5) सोजन के स्थान पर चमड़ी का सूखना व दबाने पर एक खास तरह (पापड़ टूटने जैसी) आवाज आना।
(6) सोजन वाले स्थान पर चीरा लगाने पर काले रंग का खून आना।
(7) अचानक तापमान कम होना मृत्यु का सूचक है।

बचाव एवम् उपचार :

(1) वर्षा से पूर्व टीकाकरण करावे। प्रथम टीका 6 माह की आयू के बाद लगाया जावे व 5 माह से अधिक ग्यामन पशु का टीकाकरण न करावें।
(2) रोगी पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखे।
(3) मरे हुए पशु को गहरे गढ्ढे में चूना डालकर दफना दें।
(4) यदि रोग ग्रस्त पशु चरागाह में मरा हो तो मृत पशु के आस पास की घास व मिट्‌टी चूना मिलाकर गहरे खड्डे में गाढ दे।
(5) उपचार के लिये 100 मि.लि. (बड़े पशे के लिये) बी–क्यू सीरभ त्वचा में लगावे।
(6) तत्काल चिकित्सक से परामर्श करें।
(7) सोजन के स्थान पर चारा लगाकर खून निकाल दे व लाल दवा अथवा कीटाणु नासक दवा लगावे।

.3. खुरपका मुंहपका रोग (खुराड़ मुराड़) :

कारण :

यह विषाणु जनित रोग व खुरवाले पशुओं में होता है। यह रोग अधिकतर मौसम परिवर्तन के समय अर्थात् दिसम्बर से मार्च व अगस्त से अक्टूम्बर के समय अधिक होता है। रोग का फैलाव रोग ग्रसित पशु के मुख से पड़ने वाली लार (Saliva), दूध, गोबर मूत्र आदि से फैलता है। रोगी पशु द्वारा काम में लिये गये चारे, पानी एवम् इनके उपयोग में लिये गये पात्र (वर्तन) भी रोग फैलाने के कारणों में एक है।

लक्षण :

(1) पशु का तापमान 103°–$105^{\circ}C$ होना
(2) दूध के उत्पादन में कमी।
(3) मुंह से लार पड़ना व छालों के कारण पीडा होना।
(4) थनों की कोमल त्वचा पर भी छाले होना एवम् मवाद पड़ना।
(5) खुरों के बीच जखम होना तथा कई बार खुर का चमड़ी से अलग होना।
(6) पशु का सुस्त रहना चारा आदि ग्रहण करने में कठिनाई।

बचाव एवम् उपचार :

(1) रोगी पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखें।
(2) रोगी पशु के मुह, जीभ व खुरों को पोटेश्यन पर मेगनेट के 0.1 प्रतिशत घोल से दिन में 4–5 बार धोना।
(3) खुरों के जखम को पोटेशियम परमेगनेट के घोल से साफ कर गर्टबायोटिक क्रीम लगावे।
(4) रोग ग्रसित पशु के स्थान पर कीटाणुनासक घोल छिड़के।
(5) रोगी पशु को हरा चारा कुत्तर कर, गेहूं का चापड़, बाजरी का दलिया गुड़ मिलाकर देवें।
(6) रोगी पशु को मोठ की रोटी तिल्ली के तेल में चुपड़ कर दिन में 3–4 बार खिलावे।

(7) चावल का मांड गुड मिलाकर देवे।
(8) पशु चिकित्सक से परामर्श कर एटीबायोटिक का उपयोग आगे सक्रमण न हो इसके लिये करे।
(9) रोग के बचाव के लिये वर्ष में 2 बार रोग निरोधक टीके लगवावें।

नोटः कुछ दवा कम्पनियों द्वारा मिश्रित टीका तैयार किया गया है जिसमें एक ही टीके में तीनों बीमारियां–गल घोटू, लगड़ा बुखार व खुरपका मुंह पका के बचाव के लिये उपयोग में लिया जा सकता है व प्रतिरोधक क्षमता एक वर्ष अवधि की होती है।

4. माता या रिण्डर पेस्ट की बीमारी :

इस रोग को प्लंग भी कहते है, यह विषाणु जनिलत रोग है एवम् बड़े पशुओं को प्रभावित करता है, कभी–कभी छोटे पशु (भेड़ बकरी) भी ग्रसित हो जाते है। वर्ष 1960 के आस–पास इस रोग को राजस्थान में जल मूल से समाप्त करने के लिये अभियान चलाया (टीकाकरण) गया था जिसके परिणाम बहुत अच्छे निकले। अब इस बीमारी का प्रकोप काफी कम नजर आता है।

लक्षण :

(1) तेज बुखार होना व पशु में कंपकपी होना।
(2) खूनी दस्त होना।
(3) आखें लाल होना व आखों से पानी गिरना।
(4) पैशाब पीला व कम आना।
(5) मुंह व नाक से पील स्त्राव का आना।
(6) पशु का कमजोर होकर नीचे गिरना।
(7) आयन (आचंल) पर अथवा उसके पास वाले क्षेत्र में मटर के दाने के बराबर मवाद सहित फुनसिया (Pustuleg) होना।
(8) अति गंभीर हालत में पशु 3–4 दिन में मर जाता है।

बचाव एवम् उपचार :

(1) रोगी पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखे।
(2) बीमार पशु को हवादार स्वच्छ वातावरण में रखें।
(3) आहार में चावल की माड़ या बाजरी का दलिया देवे।
(4) पर्याप्त साफ पानी पिलावे।
(5) दस्त हो तो गुनगने पानी में पोटेशियम परमेगनेट 0.1–0.2 प्रतिशत मिलाकर दिन में 2–3 बार पिलावे।
(6) रोगी पशु यदि स्वस्थ हो जाता है तो उसमें पर्याप्त रोग निरोधक क्षमता उत्पन्न हो जाता है।
(7) रोग की पहचान होने पर चिकित्सक की परमर्श पर स्वस्थ पशुओं का टीकाकरण करावें।

5. क्षय रोग अथवा टी.बी. या तपेदिक :

कारण :

यह रोग जीवाणु जनित है, तथा पशु एवम् मनुष्य के लिये घातक है। इस रोग के जीवाणुबहुत कठिनाई से नष्ट होते हैं। इस रोग के जीवाणु फैफड़ों थन (आवले) और पावन अंगों को प्रभावित करता है अतः रोग फैलने में रोगी पशु का सांस (श्वास) दूध, गोबर आदि मुख्य कारण होते है। (दूषित दूध, दूषित पानी दूषित आहार व दूषित

दूध) कभी–कभी यह रोग माता–पिता से पैतृक रूप से भी नई संतान में आता है। यह दीर्घ कालीन रोग शरीर पर धीरे–धीरे प्रभाव डालता है व रोग होने की जानकारी काफी समय बाद मालुम होती है।

लक्षण :

(1) पशु दिन दिन थकता जाता है।

(2) सांयकाल पशु का तापमान बढ़ जाता है।

(3) खोली के साथ नाक से पानी आता है।

(4) भूख कम लगती है।

(5) कभी–कभी चारा मुंह से बाहर फैकना, कुत्तो में वे (उल्टी) होना।

(6) शरीर में खून की कमी होना।

(7) पशु श्वास की गति तेज होना व दम की शिकायत होना।

(8) गले में गिल्टिया बनना।

(9) उत्पादन में कभी आना।

उपचार एवं बचाव :

(1) पशुओं की समय–समय पर जांच करावें।

(2) W/d के बाद रोगी पशु को अन्य पशुओं से अलग रखे।

(3) रोगी पशु को पर्याप्त मात्रा में शुद्ध हवा, पानी व पौष्टिक आहार उपलब्ध करावें।

(4) रोगी पशु के दूध का उपयोग नहीं करें।

(5) चिकित्सक की सलाह से औषधियों का पूर्ण कोर्स देवे।

(6) रोगी पशु के स्थान पर कीटाणु नासक दवा दवा का छिड़काव करावें।

(7) जन्मे बछड़ों को 2 सप्ताह बाद बी.सी.जी. का टीका लगवाने।

6 एनथ्रेक्स :

कारण :

यह रोग क्लोस्ट्रीडियम प्रजाती के जीवाणुओं द्वारा होता है। यह रोग पशुओं से मनष्यों से भी होता है। इस रोग में पशु अचानक बीमार होता है एवम् मर जाता है।

लक्षण :

(1) पशु के आख, कान, नाक, मुंह, गुदा से खून अथवा काले रंग का चमकदार स्त्राव आना।

(2) मरने से पहले पशु का चक्कर खाना, कापना एवम एकदम गिर जाना।

(3) सांस लेने में परेशानी होना।

(4) तेज बुखार होना।

(5) खूनी दस्त होना।

(6) पशु का तत्काल मर जाना।

(7) मृत्यु के बाद पशु का अत्याधिक फूलना।

उपचार एवं बचाव :

(1) बीमारी से बचने के लिये (सीरो वेक्सीनेशन) टीकाकरण कराया जावे।

(2) रोगी पशु को अलग रखें।

(3) पशु की देख–रेख करने वाले व्यक्ति मास्क लगाकर रखे एवम् यदि उसके शरीर पर किसी प्रकार का जखम हो तो पशु से दूर रहे।

(4) रोगी पशु से प्रभावित चारा, मिट्टी को या तो गहरा खड्डा खोदकर गाढ़ दे या जला दे।

(5) रोग का पता लगते ही चिकित्सक से परामर्श करें।

(6) मरे हुए पशु को 5 फीट खड्डे में दफना देना चाहिये।

7. फेफडियां (सी.सी.पी.पी.)

कारण :

यह रोग एक विशेष किस्म के जीवाणु समुदाय (P.P.L.O.) से फैलता है। इस रोग से गौवंश भैस वंस भेड़ व बकरी वंश अधिकतर प्रभावित होता है। यह रोग रोगों पशु द्वारा संक्रामित चारे, पानी द्वारा अथवा रोगी पशु के सम्पर्क में स्वस्थ पशु आने पर श्वास क्रिया से फैलता है। यदि सर्तकर्ता नहीं रखी जावे तो बकरियों में यह रोग बहुत तेज गति से फैलता है व पूरे एवड़ को ग्रसित करता है। मृत्युदर भी इस रोग में ज्यादा होती है।

लक्षण :

(1) रोगी पशु में बुखार तेज ($105^{\circ}C - 106^{\circ}C$) होगा।

(2) पशु का कराहना।

(3) खासी करना।

(4) श्वास लेने में कठिनाई ववास की गति ज्यादा होना।

(5) चारा दाना ग्रहण न करना।

(6) पशु के नाकों से पानी अथवा पीला स्त्राव आना।

(7) पशु के चलने में कठिनाई आना।

(8) न्यूमोनिया के सभी लक्षण का होना।

(9) मरे हुए पशु के फैफड़ों में मकराना (Marbled apearence) जैसी झलक का होना।

बचाव एवं उपचार :

(1) पशु को सर्द हवा से बचावें।

(2) रोगी पशु को स्वस्थ पशु से अलग रखें।

(3) पशु चिकित्सक से परामर्श कर एटिंबायोटिक लगावे।

(4) टीकाकरण करावें।

8. चेचक (मात्र) की बीमारी :

कारण :

यह रोग विषाणु जणित है। इस रोग से मनुष्य गाय, भेड़ व बकरी ग्रसित होते। मनुष्य में भी यह रोगी के पशुओं के सम्पर्क में आने से हो सकता है। पशु में यह रोग, रोगी के सम्पर्क में आने से, रोग के कीटाणुओं से ग्रसित चारा, दाना पानी आदि के सेवन से होता है।

लक्षण :

(1) रोगी पशु में बुखार तेज हो जाता है।

(2) चारा दाना कम लेना अथवा बन्द करना।

(3) पशु की कोमल त्वचा पर पहले लाल रंग दाने नजर आते हैं। फिर इन दोनों का आकार कुछ बड़ा हो जाता है। बाद उसके बड़े आकार वाले दानों में विशेष प्रकार का द्रव इकट्टा हो जाता है एवम् यह द्रव बाद पीला रंग का

मवाद का रूप ले लेता है। करीब 15—21 दिवस बाद मवाद जैसे से ग्रसित (फफोले) दाने सूख जाते हैं।

बचाव एवं उपचार :

(1) रोगी पशुओं को अन्य पशुओं से अलग रखें।

(2) हल्का पाचन युक्त चारा दाना देवे।

(3) सफाई की ओर विशेष ध्यान देवे।

(4) चिकित्सक से परामर्श करें।

(5) टीकाकरण करावें।

9. टिटनेस (धनुष वाय) :

यह रोग भी क्लोस्ट्रीडियम प्रणाली के जीवाणु द्वारा होता है। रोग घाव या चोट लगने से होता है। पशु के बधियाकरण से होने वाले घाव से होता है। यह रोग अश्व वंश में अधिक होता है क्योंकि इस रोग के जीवाणु घोड़े की लाद (गौबर) में विध्यमान होते हैं।

लक्षण :

(1) पशु के शरीर में कड़ापन आना।

(2) मांस—पेशियों में खिंचाव रहना।

(3) कभी—कभी मुंह खुलना बन्द होना।

(4) ज्वर होना।

(5) चारा—दाना ग्रहण करने में कठिनाई।

(6) सास लेने व भोजन निगलने में कठिनाई।

(7) पेट फूलना।

उपचार :

(1) पशु को शांत एवम् अंधेरे स्थान में रखे।

(2) घावों को कीटाणुनासक घोल से धोवे व कीटाणु नासक मल्हम से पट्टी बांधे।

(3) बधियाकरण के पहले काम में लिये जाने वाले औजारो को टिचरे आयोडिन आदि से सक्रामण रहित करें।

(4) चिकित्सक को परामर्श अनुसार एन्टीटिनेस के इंजेकशन लगवावें।

10. थनेला (आयन का पकना) :

कारण :

(1) यह रोग विभिन्न प्रजातियों के जीवाणुओं द्वारा होता है। इस रोग को मेस्टाईटिस कहते हैं।

(2) इस रोग से पूरा आयन अथवा उसका कुछ प्रभावित होता है।

(3) यह रोग थन पर या आयन पर चोट लगने से होता है।

(4) कई बार बछड़े के दूध पीते समय अधिक बल से आयन की तरफ झटका (भेटी) देने से भी हो सकता है।

(5) दूध निकालते समय ग्वाले के हाथ की सफाई न होना दूध निकालने वाले वर्तेनो की सफाई न होना भी रोग प्रकोप कर सकता है।

(6) पशुशाला में गन्दगी रोग का कारण हो सकती है।

(7) दुध दुहने के गलत तरीके भी रोग कर सकते हैं।

(8) यह रोग अधिकतर ज्यादा दूध देने वाले पशुओं में होता है व एलर्जी से हो सकता है।

लक्षण :

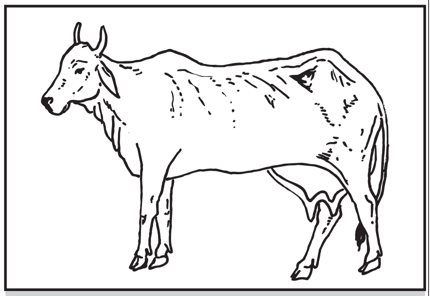

(1) अपन (आचल) गर्भ व लाल होना।
(2) अपन छुने पर पशु को पीड़ा होना व अपन सख्त होना।
(3) अचानक दूध में कमी आना।
(4) थनो से निकला दूध पहले पीला व बाद में लाल रंग का होना व दूध में छोटी छोटे गाठे होना।
(5) रोग की तीव्रता होने पर पशु का दूध देना बन्द कर देना।
(6) पशु का बेचेन रहना व बुखार होना।
(7) थनों का छोटा बड़ा होना।
(8) दूध के परिक्षण से रोग का पता लगाया जा सकता है।

उपचार एवम् बचाव :

(1) प्रारंभिक अवस्था में रोग का उपवार सम्पन है।
(2) आयन पर सेक करे बाद में गर्म पानी से सेक करें।
(3) रोग ग्रस्त आयन एवम् थनों पर आयोडेक्स की मालिस करे।
(4) चिकित्सक से परामर्श कर एंटीबायोटिक व एटीएलरजिक इन्जेक्शनों का उपयोग करें।
(5) रोग ग्रसित पशु का दूध काम में न लेवे।

परजीवी रोग :

वह रोग जिसमें कीटाणु पशु पर निर्भर रहकर जीवनयापन करते है परजीवी रोग कहलाते हैं। परजीवी बाही भी हो सके व आतंरिक भी इन रोगों में पशु बैचेन रहता है उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

1. बाही परजीवी रोग :

इस रोग में परजीवी कीटाणु अथवा जीवाणु पशु के बाहर की सतह (चमड़ी) को ग्रसित करते हैं।

(क) खुजली :

(1) यह रोग चमड़ी को प्रभावित करता है।
(2) अधिकतर यह रोग सर्दियों में होता है।
(3) सर्दियों में कुत्तों में यह रोग ज्यादा होता है व उनके सम्पर्क में आने से बड़े पपशु एवम् मनुष्यों में भी हो सकता है।
(4) पशुशाला में गन्दगी व वाही परजीवी से संक्रामित मिट्टी से रोग बढ़ने की सम्भावना रहती है।
(5) रोग ग्रसित पशु दूसरे पशु के सम्पर्क में आने से रोग का संक्रमण हो सकता है।

लक्षण :

(1) ग्रसित क्षेत्र पर खुजली आती है व पशु बार–बार खुजलाता है।
(2) ग्रसित क्षेत्र से बाल झड़ जाते हैं।
(3) अधिक खुजली से चमड़ी लाल हो जाती है व बाद में खून भी निकलने लगता है व जखम हो जाता है।
(4) पशु बैचेन रहता है व खून की कमी होना।
(5) उत्पादन में कमी आ जाती है।

बचाव एवं उपचार :

(1) स्वस्थ पशु को रोग से पीड़ित पशु के सम्पर्क में न आने दे।

(2) पशुशाला को साफ रखे व सामयिक कीटाणु नासक दवा का छिड़काव करें।

(3) पशु को देख–रेख करने वाला स्वयं सफाई रखे।

(4) खुजली के स्थान पर गधंक व तेल मिलाकर लगाव।

(5) ब्यूटोक्स का छिड़काव (स्प्रे) करें।

(6) जखम होने पर कीटाणु/जीवाणु नासक क्रीम लगावे।

(7) पशु चिकित्सक से परामर्श करें।

(ख) दाद/चमड़ी की अन्य व्याधी :

(1) इस रोग में चमड़ी पर छोटे या बड़े चकते हो जाते हैं।

(2) वह रोगे बाही पर जीवी अथवा कीटाणु से भी होता है।

(3) तेजाब युक्त पदार्थ से इस रोग के बढ़नपे की सम्भावना रहती है।

(4) विभिन्न पदार्थो के सेवन से, चमड़ी के सम्पर्क में आने से एलर्जी के कारण भी यह रोग हो सकता है।

लक्षण :

(1) चमड़ी पर चकते हो जाते हैं।

(2) चकतो के स्थान से बाल उड़ जाना।

(3) चकतो से तरल पदार्थ का स्त्राव आना।

(4) पशु का बैचेन रहना।

(5) पीड़ित क्षेत्र पर जल अथवा खुजली आना।

(6) पीड़ित क्षेत्र की चमड़ी सूकना।

बचाव एवम् उपचार :

(1) पशुशाला को साफ रखें।

(2) पशु को सप्ताह में 1 बार डिटोल डालकर नहलावे।

(3) एलर्जिक पदार्थो से बचाव करें।

(4) बिटनोवेट क्रीम लगावे।

(5) चिकित्सक से परामर्श करें।

2. आंतरिक परजीवी रोग :

वे जीव (कीटाणु) जो पशु के शरीर के भीतर रहकर निर्वाह करते हैं उन्हें आंतरिक परजीवी कहते है। यह गौल, चपटे, पत्तीदार व फीता जैसे होते हैं व इनके द्वारा पैदा किये गये रोग विभिन नामों से जाने जाते हैं वर्षा ऋतु में इनका प्रकोप ज्यादा होता है।

कारण :

(1) कीटाणु अथवा कीटाणु से ग्रसित पानी (तालब, पोखर, नाड़ी, पशुओं को पानी पिलाने के खेली) पीने से।

(2) रोग ग्रसित पानी के साथ दाना खाना से।

(3) संक्रमित चारा खाने से।

(4) गोबर आदि से संक्रमित अस्वाध्य सामग्री के सेवन से।

(5) बछड़ों में संक्रमित दूध के सेवन से व कभी–कभी कार्य अवस्था माता–पिता व पैतृक रूप से।

लक्षण :

(1) पशु द्वारा पतला गोबर करना।

(2) गोबर में बदबू आना।

(3) पशु द्वारा चारा–पानी कम ग्रहण करना।

(4) पशु का कमजोर होना।

(5) कभी–कभी पशु को कब्जा एवम् आफरा होना।

(6) कभी–कभी दस्त के साथ खून आना।

(7) पत्तीदार कीटाणुओं (पर जीवों) के प्रकोप से गले के आस–पास सोजन आना।

(8) दस्त के साथ कीड़ों का निकलना।

(9) पशु में खून की कमी होना।

(10) पशु के प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना।

बचाव :

(1) पशु शाला को साफ सुथरा व नमी रहित रखें।

(2) पशुओं स्वच्छ पानी पिलावे तालाब या नाड़ी का दूषित पानी नहीं पिलावे।

(3) बीमार पशुओं को स्वस्थ पशु से अलग रखे।

(4) वर्षा से पहले व वर्षा के बाद में पशु चिकित्सक से परामर्श कर क्रमिनासक दवा देवे।

(5) पशु को पौष्टिक और संतुलित आहार देवे।

(घ) पोषण

पशु के स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये व प्रजनन एवम् उत्पादन क्षमता बनाये रखने के लिये पशु को अच्छा चारा व संतुलित आहार से पोषित किया जाना आवश्यक है।

पशु को आहार मुख्यतः निम्न बिन्दुओं पर आधारित होता है।

(1) चारा।　　(2) पोषाहार।

चाराः औसत एक पशु को उसके वजन का 2–25 प्रतिशत चारा प्रतिदिन दिया जाना चाहिये। चारा सूखा भी हो सकता है एवम् हरा भी।

सूखे चारे निम्न फसलों का चारा उपलब्धता के अनुसार उपयोग में लिया जा सकता है।

(1) बाजरा	(2) ग्वार	(3) ज्वार
(4) गेहू का भूस्सा	(5) सोयाबीन	(6) चने का खारिया
(7) मसूर	(8) मूंगफली	(9) मूंग–मोठ एवम् मेथी का चारा।

चारागाह की घास :

हरे चारे में उपलब्धता अनुसार निम्न फसलों का हरा चारा उपयोग में लिया जा सकता है।

(1) मक्की	(2) बाजरा	(3) रिजका बाजरी
(4) एम.पी. चरी	(5) ज्वार	(6) रिजका
(7) ग्वार	(8) चारागाह की घास।	

नोट :
(1) जहां तक हो सके चारा कुतर कर देवे।
(2) कच्ची हरी ज्वार का उपयोग नहीं करे।
(3) हरा व सूखा चारा मिलाकर देवे तो 1 किलो सूखे चारे को 3 किलो हरे चारे के अनुपात में खिलावे।
(4) सूखे से हरे व हरे से सूखे चारे में बदलाव धीरे–धीरे करें।

चारे को उपचारित करना :

अकाल स्थिति में अथवा कमगुण बर्तन वाले चारे को उपचारित कर उसकी गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है। निम्नानुसार चारे को उपचारित किया जा सकता है।

चारा उपचार के लिये सामग्री :

(1) सूखा (कम गुणवत्ता वाला) चारा	100 किलोग्राम
(2) यूरिया	1–2 किलोग्राम
(3) पानी	30–40 लीटर
(4) गुड़	7–10 किलोग्राम
(5) नमक	1 किलोग्राम
(6) खनिज लवण	1 किलोग्राम
(7) हड्डी का चूरा	1 किलोग्राम

विधि :

सर्वप्रथम यूरिया को 10–15 लीटर पानी में घोल लेवे गुड़, नमक, लवण व हड्डी का चूरा 15–20 लीटर पानी में घोल लेवे। अब सूखे चारे की सीमेन्ट को फर्श पर (यदि सीमेन्ट की फर्श उपलब्ध न हो तो प्लास्टिक या त्रिपाल का 1/3 भाग फेला देवे व यूरिया के घोल का करीब) भाग फेला देवे व यूरिया के घोल का करीब) भाग इस पर छड़के व चारे के साथ अच्छी तरह मिला दे। बाद में उसके गुड़ आदि का बनाया हुआ घोल का) इस यूरिया घोल मिले हुए चारे पर छिड़कर अच्छी तरह मिलावें। पुनः शेष रहे चारे को उपर दर्शायी गयी विधि के अनुसार क्रिया कर सम्पूर्ण उपचारित चरे को अच्छी तरह मिलावे जिससे यूरिया व गुड़ आदि का घोल पूर्ण तरह चारे में मिल जावे। बाढ़ इस उपचारित चारे को त्रिपाल अथवा प्लास्टिक के मेणिये से 72 घण्टों के लिये ढक कर रखे। 72 घण्टे बाद मेणिये को हटा देवे 2–3 घण्टे हवा लगावे व पशुओं को आवश्यकता निर्धारित मात्रा अनुसार खिलावे।

नोट : 1. यह उपचारित चार–चार माह से छोटे पशुओं को नहीं खिलावें।
2. अधिक मात्रा में उपचारित चारा नहीं खिलावें।

(ड) चारागाह विकास

पुरानी व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक गांव में पशुओं की चरायी हेतु गोचर व औरण (देवी–देवताओं के नाम सुरक्षित भूमि) सुरक्षित रखी गई थी। समय के साथ व बदलते हालात से गोचर व औरण भूमि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा व वर्तमान में गोचर भूमि का क्षेत्रफल घटता जा रहा है साथ ही उसके रख–रखाव पर ध्यान दिया जाना नगण्य सा हो गया है। परिणाम स्वरूप गाव के पशुधन का पालन अनार्थिक हो गया है। समय आ गया है कि ग्रामीण पशुपालक अब भी प्रयास कर गोचर/ओरण की भूमि को पशु चराई के अलावा अन्य उपयोग हेतु न तो स्वयम के काम लेवे न ही अन्य किसी व्यक्ति विशेष अथवा संस्था को काम में लेने देवे। वर्तमान में गोचर भूमि पंचायतों के अधिनस्थ है व इसके विकास के लिये पशुपालकों को सामूहिक रूप से पंचायत से निवेदन करना चाहिये अथवा पशुपालक समुदाय की समिति बनाकर राज्य सरकार से तकनकी सलाह (कृषि विभाग) प्राप्त कर गोचर के विकास हेतु कदम उठाने चाहिये। राजस्थान में अच्छी गुणवत्ता वाली निम्न घासे पाई जाती है।

(1) सीवन (2) घायल (3) अजण (4) भूरट आदि

उक्त जिस क्षेत्र में जो घास उपयुक्त हो उसका विकास करना चाहिये। कृषि विभाग के साथ–साथ काजरी संस्था की सेवायें भी चारागाह विकास हेतु ली जा सकती है। गोचर विकास के बाद पंचायत अथवा ग्रामीण समुदाय नियम बनाकर गोचर का उपयोग करें व प्रतिवर्ष उसके गोचर संधारण एवम् विकास की ओर ध्यान देवे जिससे पशुधन को अच्छा चारा कम खर्चे पर उपलब्ध हो सके व उत्पादन बढ़ाने में योगदान मिल सके।

पोषाहार :

पशु को स्वस्थ रखने के लिये केवल चारे ही पर्याप्त नहीं है उन्हें स्वस्थ रखने के साथ–साथ उनकी उत्पादन क्षमता को बनाये रखने के लिये संतुलित पोषाहार दिया जाना आवश्यक है।

संतुलित पोषाहर :

ऐसा पोषाहार जिसमें कार्बोहाईड्रेट, प्रोटीन, वसा, शरकरा, नमक व मिनरल पर्याप्त मात्रा में हो। संतुलित पोषाहार में औसतन (विभिन्न तत्वों का) निम्न अनुपात होना चाहिए।

क्र.सं.	तत्व	मात्रा	अवयव
1.	कार्बोहाईड्रेट	50 %	गेहू का चापड़, जौदलिया बाजारी का दलितया, मक्की का दलिया
2.	प्रोटीन	25 %	ग्वार दलिया, मूंग, मोठ चूरी चना चूरी, सोयाबीन चूरी, मटर चूरी।
3.	वस	7-10 %	तिल, सरसो, कपास, मूंगफली की खल
4.	शरकरा	7-10 %	गुड़, मोलेसिस
5.	नमक	5 %	
6.	मिनरल मिक्सचर	3-5 %	

नोट : (1) पशु आहार 2 घण्टे पूर्व भिगोदें व बाद में खिलावे।
(2) दोनों सयम में दिये जाने वाले में अंतराल अवश्य रखें।

मात्रा :

संवर्धन हेतु यदि पशु को 6 माह की उम्र के बाद चारे के साथ पोषाहार दिया जावे तो बड़े होने पर अच्छे उत्पादन वाले पशु तैयार होंगे व रोग निरोध क्षमता भी अच्छी होगी।

गाय / भैस	6 माह से 1 वर्ष	250–300 ग्राम प्रतिदिन
	1 वर्ष से) वर्ष	500–600 ग्राम प्रतिदिन
	1) से 2 वर्ष	2 किलो प्रतिदिन।

दूध देने वाली गाय भैस को अच्छे उत्पादन के लिये प्रति 1 लीटर दूध पर 400–500 ग्राम अतिरिक्त पोषाहार बढ़ाना चाहिये।

भेड़ / बकरी	3 माह–6 माह	50–100 ग्राम प्रतिदिन
	6 माह–1 वर्ष	100–250 ग्राम प्रतिदिन
	1 वर्ष से अधिक	300–500 ग्राम प्रतिदिन

दूध उत्पादन के अनुसार पशु आहार की मात्रा बढ़ाई जावें।

> नोट : बड़े पशु गाय / भैस को 60–70 ग्राम नमक (पानी अथवा आहार के साथ) प्रति अवश्यक रूप से दिया जावे। शारीरिक श्रम करने वाले पशु (बैल आदि को) क्रम के अनुसार 1.5–2 किलोग्राम पशु आहर दिया जाना चाहिये।

(च) प्रजनन (वंश-वृद्धि)

अधिक उत्पाद के लिये अच्छे व उपयुक्त नस्ल के पशु का पालन ही लाभकारी होता है। अतः मादा पशुओं को उन्नत (नस्ली) साण्ड, पाड़ा बकरा व भेडे से ग्यामन करावे जिससे नस्ल सुधार के साथ उत्पादन में वृद्धि होगी।

प्रजनन-विधियां :

(1) प्राकृतिक प्रजनन : इस विधि के अनुसार प्रकृति में विचरण कर रहे पशुओं (नर एवम् मादा) का समागम होता है।

(2) कृत्रिम प्रजनन : इस विधि के अनुसार उन्नत नरों का वीर्य (शुक्रकोट) का वैज्ञानिक तरीको से संकलन कर लम्बी अवधि तक सुरक्षित रखा जाता है व कृत्रिम विधि से (बाही उपकरणों द्वारा) मादा पशु के प्रतुमय (Heat) होने पर वैज्ञानिक तरीको से (माद पशु के) गर्भाशय में प्रेषित किया जाता है। माद पशु के ताव (Heat) के अंतिम घण्टों में (Near End of Heat) कृत्रिम गर्भाधान कराना उचित रहता है।

क्रास प्रजनन :

शुद्ध विदेशी नस्ल के नर पशु से देशी माता पशु को ग्यामन कराने की प्रक्रीया को क्रोस प्रजनन कहते है। इस अवधि से उत्पन्न शंकर नस्ल की कहलाती है व अधिक उत्पादन देने की क्षमता रखती है लेकिन इनके (शंकर नस्ल) रख–रखाव पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होता है।

मादा पशु के तत्व में आने के लक्षण :

(1) पशु द्वारा चारा कम चरना।

(2) दूसरे पशुओं परि चढ़ना।

(3) बार–बार पेशाब करना।

(4) योनी द्वार से रंगहीन गाढ़ स्त्राव आना।

(5) योनी का फूलना

(6) पूछ को योनीदार से ऊपर रखना।

(7) गायों में तत्व की अवधि 12–18 (कभी–कभी 27 दिन) बाद पुनः गाय ताव में आती है।

ग्यामन पशु के लक्षण :

(1) पशु ताव में आना बन्द हो जावेगा।
(2) पशु शांत व सीधा रहेगा।
(3) ऊपयन और योनी में बढ़ाव होने लगेगा।
(4) ग्याय की अवधि के अनुसार पेट धीरे–धीरे बढ़ने लगेगा।
(5) नर पशु को नजदीक नहीं आने देगी।
(6) औसतन गाय का प्रसव काल 280 दिवस का होता है।
(7) स्वस्थ व अच्छा पोषित पशु ब्याने के 2–3 माह बाद वापस ताव में आ जाता है।
(8) ग्याय की अवधि के साथ–साथ दूध की मात्रा और स्वान नमकीन हो जात है।
(9) गर्भावस्था में योनी दार से किसी प्रकार का अप्राकृति स्त्राव नहीं आता।

ग्यामिन पशु की देख–रेख :

(1) ग्यामिन पशु शांत वतावरण में रखे।
(2) ग्यामिन पशु के चारे–दाने की और विशेष ध्यान दिया जावे।
(3) जिन पशु में ब्याने के पहले दूध उतर आता है। उन पशुओं का दूध नहीं निकले
(4) पशु के ब्याने के करीब 1–2 माह पूर्व दूध निकालना बन्द कर दें।

प्रसव के समय ध्यान देने योग्य बाते :

(1) पशु को स्वच्छ व शांत वातावरण स्थान पर रखें।
(2) स्थान काओं अथवा नुकिले पदार्थो से रहित हो।
(3) पशु के खड़े होने का स्थान मुलायम हो जिसके लिये घास फूस या तापी रेत बिछाई।
(4) प्रसव के समय पशु को नीचे बिठा दे।
(5) प्रसव पीड़ा कम हो और नवताजत के गर्भ से बाहर आने में कठिनाई हो तो पशुपालक नवजात को धीरे–धीरे बाहर निकालने का प्रयास करे।
(6) ब्याने के बाद जेर (Plecenta) वैध 6–8 घण्टे में गिर जाती है यदि जेर नहीं गिरे या निकले तो पशु चिकित्सक से परामर्श करें।
(7) प्रसव के बाद बच्चेदानी की सफाई के लिये व गर्भाशय को सामान्य स्थिति में लाने के लिये 200–500 ग्राम रिपलेण्टा या 500 मि.लि. यूटरोटोन देना चाहिये।

नवजात पशु की देखभाल :

(1) प्रसव के तत्काल बाद नवजात के कान, नाक, व मुंह को साफ करें।
(2) नवजात पशु को साफ कपड़े से पौछे एवं उसकी मां के पास चाटने को रखें।
(3) नवजात की नल काटकर साफ धागे से बांधे व टिंचर आयोडीन अथवा हल्दी लगावे।
(4) नवजात की खीस (प्रथम दूध) तत्काल व धीरे धीरे पिलावे जिससे प्रतिरोधक क्षमता बढ़े।
(5) नवजात को कोमल स्थान पर रखें।
(6) पशु चिकित्सक से समय–समय पर जांच करावें।

प्रसव के बाद पशु की देखभाल :

(1) ब्याने के तत्काल बाद कार्बोहाईड्रेट युक्त चारा दाना (1) किलो बाजरी उबाल कर 25 ग्राम नमक के साथ सुबह–शाम) देना चाहिये।

(2) ब्याने के सात दिवस खली य तेलयुक्त पदार्थ न दे।
(3) पशु आहार की मात्रा धीरे–धीरे बढ़ावे।
(4) पशु के जेर न खाने दे। यदि पेर स्वतः न गिरे तो जेर निकालने का प्रयास करे अथवा चिकित्सक से निकलवावे।
(5) यदि पशु में मिल्क फीबर के लक्षण नजर आवे तो पशु चिकित्सक से केलशियम युक्त इंजेक्शन लगवावें।

बधियाकरण :

नस्ल सुधार के लिये अवश्यक है कि नकरा नर पशु और जिनकी 6 माह से 1 वर्ष हो चुकी है। का बंधियाकरण बोर्डजो केस्ट्रेटर से किया जा सकता है। इस अवधि से पशु को कम से कम पीड़ा होती है तथा कोई जखम नहीं होता। बधियाकरण से अच्छ बैल खेती के लिये अच्छे बकरे व भेड़े मांस के लिये उपलब्ध हो सकेंगे व नस्ल सुधार में पूर्ण योगदन देंगे।

दुग्ध अभिलेखन :

पशु के उत्पाद की मात्रा एवम् गुणवत्ता को जानकरी के लिये दुग्ध अभिलेखन किया जाना आवश्यक है जिससे पोषाहार की मात्रा आवश्यकता अनुसार बढ़ाकर अधिक उत्पादन लिया जा सके व यदि पशु अनार्थिक है तो छटनी की जा सके व अच्छे उत्पादन वाले पशुओं को बेचने के समय उपयुक्त मूल्य लिया जा सके। यह ही नहीं अधिक उत्पादन वाले पशु के बछडों का सर्वधम (उचित भरण पोषण) किया जावे जिससे बड़े होने पर अच्छे साण्ड परिसेवा के लिये तैयार किया जा सके।

प्रजनन सम्बन्धी व्याधियां :

(1) बांझपन
(2) गर्भपात
(3) प्रसव में कष्ट
(4) गर्भाशय का बाहर आना।

बांझपन :

मादा पशु की परिपक्व उम्र पर ताव में न आना, ग्याभिन न हो पाना आदि बिन्दु बांझपन की परिभाषा में आते हैं।

कारण :

(1) कुपोषणः बचपन से पर्याप्त मात्रा में चारे दाने की कमी, संतुलित आहार की कमी, प्रजनन अंगों का पूर्ण विकास न होना, परजीवी से पीड़ित होना व कभी–कभी पैतृक गुणों के कारण प्रजनन अंगों पूर्णतया या आशिंक अभाव होना, शरीर में हारमोन का संतुलित प्रवाह न होना, रोग के करण।

लक्षण :

मादा पशु का परिपक्व उम्र पर या उसके बाद भी ताव में नहीं आना।

उपचार :

(1) बचपन से पशु के (सर्वध्न) भरण पोषण की ओर ध्यान दिय जावे।
(2) 50 ग्राम नमक प्रतिदिन प्रति पशु दिया जावे।
(3) परजीवी के लिये क्रमीनाशक दवा समय समय पर पर दी जावे।
(4) किसी रोग से पीड़ित हो तो चिकित्सा करायी जावे।

(5) पशु को 750 ग्राम से 1 किलोग्राम प्रतिदिन विशेष दाना (मूंग, मोठ, चना, मात्रा) अंकूरित कर 16–25 दिवस खिलावे।

(6) परजनना के पस्पूल 2 उपयोग करें।

(7) प्श्ज्ञफ थ्व्थ्क्तस्व रै प्श्रम्श्ज्ञ क्श्रै।

गर्भपात :

गर्भस्थ शिशु का समय से पूर्व बाहर आना।

कारण :

(1) बाहरी चोट का लगना।

(2) पशु द्वारा ऐसी जड़ी बूटी या संक्रामित चारा ग्रहण करना जिसे एलर्जी के कारण गर्भपात होना जैसे गूंदिया रोग लगा बाजरा आदि।

(3) संक्रमण द्वार जैसे बूचिलोसिस ट्राईकोमोनियासिस, वाईब्रोसि आदि।

(4) संतुलित आहार न मिलने से अथवा प्रजनन अंगों के पूर्ण विकास न होने के कारण पर्याप्त अथवा असंतुलित हारमोन का प्रवाह होना।

(5) ग्यामन पशु को गर्भित होते हुए कृत्रिम गर्भाधान से अथवा प्रकृतिक (साण्ड से) परिसेवा के कारण।

लक्षण :

(1) गर्भस्थ पशु का समय से पूर्व जीवित अथवा मृत रूप से बाहर आ जाना।

(2) समय से पूर्व प्रसव के लक्षण दिखाई देना।

(3) योनि से बदबूदार तरल स्त्रावित होना।

उपचार :

(1) गर्भपात के बाद गर्भाशय की सफाई लाल दवा (पोटेशियम परमेगनेट) आदि अन्य एन्टीसेपटिक दवा से करें व गर्भाशय से किसी प्रकार का संक्रमण न हो इसके लिये एन्टीबायोटिक गोली गर्भाशय में रखे।

(2) पशु की जर को बाहर निकाले।

(3) चिकित्सक से परामर्श करें।

प्रसव में कष्ट :

साधारण तय पूर्ण प्रसव (गर्भकाल) काल पर नवजात आसानी से प्राकृतिक रूप से अथवा मामूली बाही सहायता से बाहर आ जाता है। लेकिन कई बार विभिन्न करणों से बच्चे का बाहर आना मुश्किल हो जाता है।

कारण :

(1) हारमोन की कमी के कारण योनी द्वार का मुंह पूरा नहीं खुलना।

(2) गर्भाशय में एठ न होना।

(3) गर्भस्थ शिशु का असामान्य स्थिति होना।

(4) गर्भ शिशु जनेनद्रिय मांग के अनुपात में बड़ा होना।

(5) योनि में गाठ होना।

(6) एक से अधिक बच्चे होना।

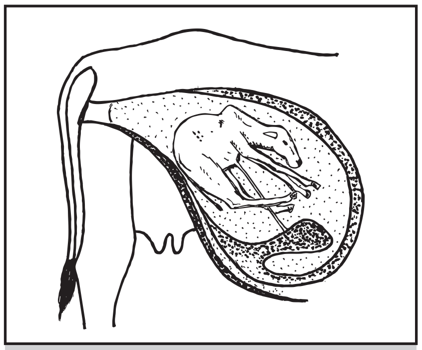

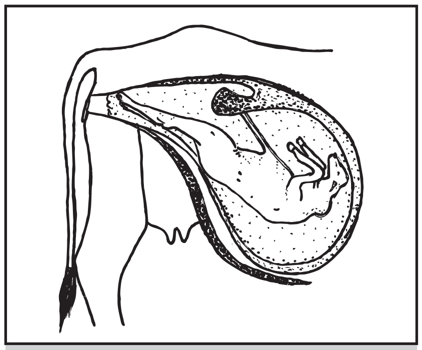

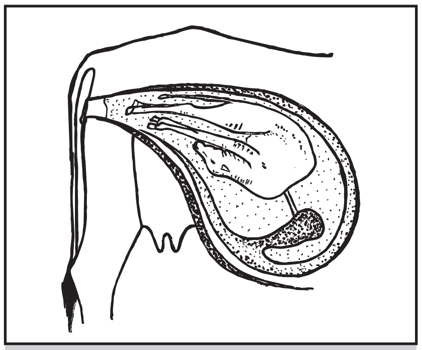

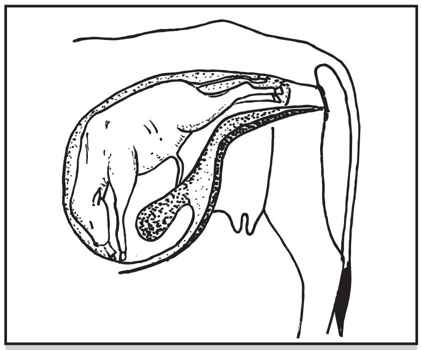

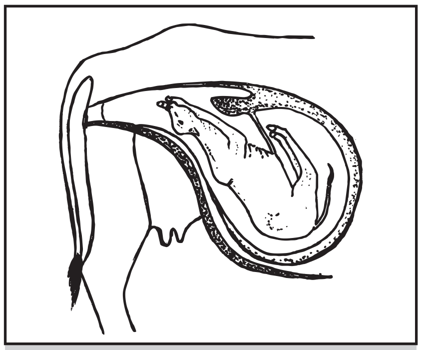

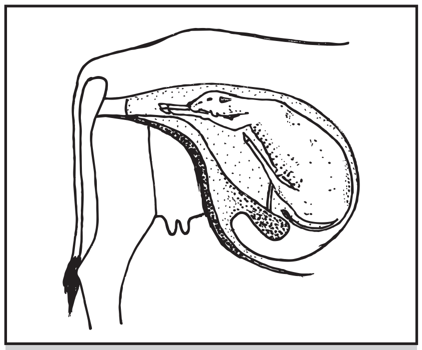

उपचार :

(1) हाथें को साफ धोकर चिकनाई लगाकर योनी में धीरे–धीरे डालकर गर्भस्थ शिशु की स्थिति का पता लगावे।

(2) असामान्य स्थिति होने पर भ्रूण की स्थिति सही करने का प्रयास करें।

(3) जननेन्द्रिय मार्ग को चिकनाई युक्त करें जिससे भ्रुण को बाहर निकालने में आसानी रहे।

(4) यदि गर्भाशय में एंठन हो तो एक व्यक्ति योनी में हाथ डालकर एठन का मालूम करें गर्भाशय के पकड़ कर एक स्थिति में रखे इसके साथ ही उसके 2–3 अन्य साथ मादा पशु को एठन के विपरीदिश में घुमावें (लौटावे) जिससे एठन दूर हो जावेगी।

(5) भ्रुण न निकलने पर चिकित्सक से शल्य क्रिया से भ्रुण बाहर निकलवावे।

(6) पशु चिकित्सक से परामर्श कर योनीदार का मुख खोलने के लिये हारमोन के इंजेक्शन का प्रयोग करें।

जैर/आवल का रूकना :

जेर/आंवल के माध्यम से भ्रुण गर्भावस्था में पोषण प्राप्त करता है। जेर गर्भाशय से जुड़ा रहता है व प्रसव के बाद स्वतः ही बाहर गिर जाता है। परन्तु कई बार जेर नहीं निकलती व अन्दर ही अन्दर सड़ने लगती है जो पशु के स्वस्थ व उत्पादन के लिये घातक होती है।

ग्रामीण विकास विज्ञान समिति (ग्राविस) एक गैरसरकारी, स्वैच्छिक संस्था है जो महात्मा गाँधी की विचारधारा से प्रेरित होकर थार मरूस्थल के ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु प्रयासशील है। 1983 में स्थापित यह संस्था अब तक 50,000 परिवारों को लाभान्वित कर चुकी है। संस्था का कार्यक्षेत्र लगभग 850 गाँवों में फैला है तथा ग्राविस ने 1100 से अधिक सामुदायिक संगठनों को गठित किया है। अपने गम्भीर प्रयासों, अनुसंधान तथा प्रकाशनों के माध्यम से ग्राविस ने स्वैच्छिक जगत में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है।

ग्राविस
3/437, 458, मिल्कमैन कॉलोनी,
पाल रोड़, जोधपुर, 342008
राजस्थान, भारत

फोन : 91 291 2785 317,
2785 549, 2785 116

फैक्स : 91 291 2785 116

ई मेल : email@gravis.org.in

वेबसाईट : www.gravis.org.in

Copyright(c) 2010 GRAVIS
All rights reserved.